भारतीय लेखा परीक्षा एवं लेखा विभाग

INDIAN AUDIT AND ACCOUNTS DEPARTMENT

सागर ऊर्मिका

❖ अंक : 3 ❖












कार्यालय महालेखाकार, गोवा

आलतो परवरी, गोवा-403114

आवरण पृष्ठ- गोवा के राज्य प्रतीक



राज्य पशु – गौर



राज्य पक्षी – फ्लेम-थ्रोटेड बुलबुल



राज्य वृक्ष – मट्टी



राज्य पुष्प – लाल चमेली



राज्य प्रतीक चिह्न – गोवा



राज्य भाषा – कोंकणी



लोक नृत्य – धालो



राज्य फल – काजू



गोवा का समुद्र तट

लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा

सागर ऊर्मिका

कार्यालयीन गृहपत्रिका

(अंक : 3)



भारतीय लेखा परीक्षा एवं लेखा विभाग

INDIAN AUDIT AND ACCOUNTS DEPARTMENT

कार्यालय महालेखाकार, गोवा

आलतो परवरी, गोवा-403114

सागर ऊर्मिका परिवार

संरक्षक

सुश्री इति शुक्ला, महालेखाकार, गोवा

मुख्य संपादक

श्री बाषा मोहम्मद बी, उप महालेखाकार

सदस्य

श्री जॉर्ज वर्गीस, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (राजभाषा)
श्री राज, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी (राजभाषा)

परामर्शदात्री समिति

सुश्री प्रियंका केसरवानी
श्री संदीप
श्री अनमोल शर्मा

डिजिटल टीम

श्री रवि सैनी
श्री रोहित धामा
श्री प्रदीप सिंह चारण
श्री सनी सांवत

पत्रिका में प्रस्तुत विचार रचनाकारों के व्यक्तिगत विचार हैं। सम्पादन मण्डल की सहमति आवश्यक नहीं है।



सुश्री इति शुक्ला
महालेखाकार

संदेश

इस कार्यालय की गृह पत्रिका "सागर उर्मिका" के विमोचन पर मुझे अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। हिन्दी भारत की राजभाषा होने के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है, जो सांस्कृतिक अस्मिता, भाषिक गौरव तथा पारंपरिक विरासत के संरक्षण को बढ़ावा देकर राष्ट्र-निर्माण में योगदान करती है। राजभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार केवल एक संवैधानिक दायित्व मात्र नहीं, अपितु हमारी सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ा हुआ विषय है।

इस पत्रिका में सम्मिलित रचनाएँ इस कार्यालय में कार्यरत पदधारियों की रचनात्मकता का प्रतिबिंब हैं। मुझे विश्वास है कि यह पत्रिका न केवल राजभाषा के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को सुदृढ़ करेगी, अपितु कार्यालय के सदस्यों में आपसी सद्भाव, सृजनात्मकता और भाषायी अभिरुचि को भी बढ़ावा देगी।

पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु मैं संपादक मण्डल एवं सभी लेखकों को हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करती हूँ तथा आशा करती हूँ कि "सागर उर्मिका" की यह यात्रा निरंतर आगे बढ़ती रहेगी।

सुश्री इति शुक्ला
महालेखाकार, गोवा



श्री बाषा मोहम्मद बी.
उप महालेखाकार

संदेश

पत्रिका के इस नवीन अंक के प्रकाशन द्वारा एक नए उत्साह का संचार हुआ है। कार्यालयीन कार्य में कुशल कर्मचारियों ने अपनी रचनाओं यथा लेखों से ज्ञान व परिष्कृत विचारों तथा कविता, कहानी आदि के माध्यम से अपने भावों का सुंदर व प्रतिभापूर्ण परिचय दिया है। पत्रिका में रचनाओं के साथ ही कार्यालय परिसर के महत्वपूर्ण आयोजनों जैसे हिंदी दिवस तथा ऑडिट दिवस का भी वर्णन है।

पत्रिका में भाग लेने वाले सभी रचनाकारों को शुभकामनाएं। प्रकाशकीय दायित्व को कुशलतापूर्वक और श्रमसाध्य तरीके से निभाने के लिए विशेष शुभकामनाएं। आशा है यह अंक आप पाठकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरेगा एवं आप अपनी प्रतिक्रियाओं से हमें अवश्य अवगत करायेंगे।

श्री बाषा मोहम्मद बी.
उप महालेखाकार

संपादकीय



इस बार का स्वतंत्रता दिवस (15 अगस्त) हमारे कार्यालय के लिए बहुत खास रहा। इस मौके पर हमारी महालेखाकार महोदया ने अपना पूरा भाषण हिंदी में दिया। इससे न सिर्फ राजभाषा हिंदी के प्रति उनका सम्मान दिखा, बल्कि कार्यालय के सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को भी हिंदी में काम करने की एक नई प्रेरणा मिली। उनकी इस शानदार पहल से पूरे कार्यालय में नई ऊर्जा और गर्व का संचार हुआ है। 'सागर ऊर्मिका' परिवार इस सराहनीय पहल के लिए उनका हृदय से आभार व्यक्त करता है।

हमें यह बताते हुए बेहद खुशी हो रही है कि "सागर ऊर्मिका" के पहले और दूसरे अंक को देशभर के कई सी.ए.जी. कार्यालयों में बहुत पसंद किया गया है। आपके इस प्यार और उत्साहवर्धन से हमें यकीन हो गया है कि हिंदी को बढ़ावा देने की हमारी यह छोटी-सी कोशिश सफल हो रही है। यह तारीफ हमारे लेखकों की मेहनत का सम्मान है और हमें आगे भी बेहतरीन रचनाएँ आप तक पहुँचाने की प्रेरणा देती है। पाठकों से मिलने वाले संदेश और उत्साह ही हमारी असली ताकत हैं, जो हमें हर बार कुछ नया और बेहतर करने का हौसला देते हैं।

अब हम पूरे उत्साह के साथ आपके सामने "सागर ऊर्मिका" का तीसरा अंक (अंक-3) पेश कर रहे हैं। इसमें हमारे कार्यालय के होनहार साथियों की लिखी कविताएं, कहानियां और उनके अनुभव (संस्मरण) शामिल हैं। हमें पूरी उम्मीद है कि पिछले अंकों की तरह यह अंक भी आपको बहुत पसंद आएगा। हमेशा की तरह, इस बार भी हमें आपके बहुमूल्य विचारों और सुझावों का इंतज़ार रहेगा। आइए, मिलकर राजभाषा के इस सफर को और भी खूबसूरत बनाएं।

"साहित्य के इस सागर में उठती एक नई 'ऊर्मिका' के साथ... जय हिंद!"

अनुक्रमणिका

क्र.	शीर्षक	रचनाकार	विवरण	पृष्ठ
1.	पापा मेरी जान	राजीव गांधी	कविता	10
2.	मुट्ठी भर मिट्टी	प्रदीप सिंह चारण	विचारात्मक गद्य	11
3.	मिट्टी की बेटी	प्रदीप सिंह चारण	कहानी	13
4.	पिता और पुत्र: ज़िम्मेदारी और भावनाओं का अनमोल रिश्ता	विनोद कुमार	कविता	16
5.	मेरी सरकारी यात्रा (1992–2026 तक)	एस जयश्री	कविता	18
6.	नए कीर्तिमान बनाते जाना	शीवेंद्र सिंह	कविता	20
7.	चमकती चाँदनी की शीतलता	आशीष वर्मा	कविता	21
8.	ज़िम्मेदारी का बोझ	आशीष वर्मा	कविता	21
9.	छोड़ा कष्ट	आशीष वर्मा	कविता	22
10.	होते जाओगे सब से दूर	सुनील	कविता	23
11.	अजीब दौर	राज	कविता	24
12.	हकीकत का आईना	राज	कविता	25
13.	हिन्दी से मेरा परिचय	राकेश दास	संस्मरण/लेख	26
14.	मुंबई की यात्रा : प्रशिक्षण से बढ़कर एक मानवीय अनुभव	शोभा हरिकुमार	यात्रा-वृतांत	28
15.	आवाज़	राजीव गांधी	कविता	30
16.	जड़ों की गूंज और एकांत का सफर	राज	कहानी	31
17.	दिल्ली से लक्षद्वीप: एक यात्रा वृत्तांत	अन्नपूर्णा बनर्जी	यात्रा-वृतांत	33
18.	परमात्मा का कार्यालय	मेघन पासवान	कहानी/व्यंग्य	36
19.	मेरा भ्रम टूट गया	मेघन पासवान	कविता	39
20.	झूठी खुशी का भ्रम	रवि सैनी	कहानी	40
21.	संकल्प शक्ति	श्रीलेखा एस मेनन	लेख	42
22.	मुस्कराना	श्रीलेखा एस मेनन	कविता	43
23.	मेहनत कभी बेकार नहीं जाती	गजानन मोदी	कविता	44
24.	बरगद	अनमोल शर्मा	कहानी	45
25.	सिर्फ काम नहीं, जीवन भी ज़रूरी है	अविनाश कुमार	कहानी	47
26.	रंगों से बढ़कर रिश्तों का उत्सव	बिजय शंकर	कहानी	49
27.	ऑफिस की चाय — हर समस्या का अनौपचारिक समाधान	मनीष यादव	कहानी	51
28.	डिजिटल भुगतान करते समय किन बातों का ध्यान रखें	संजीव कुमार	लेख	53
29.	नींद की कीमत	शिवोम शर्मा	कहानी	54
30.	विरह	अनमोल शर्मा	कविता	56

क्र.	शीर्षक	रचनाकार	विवरण	पृष्ठ
31.	मैं रोज़ थोड़ा-सा उजाला बोता हूँ	कार्तिक शर्मा	कविता	57
32.	प्रकृति का हिसाब-किताब: आज की सुविधा, कल की कीमत	गजानन मोदी	लेख	58
33.	सन्नाटे की आवाज़	रोहित धामा	लेख	59
34.	खाली जेब का अमीर	रोहित धामा	कहानी	60
35.	आख़िरी दीपक	रोहित धामा	कहानी	61
36.	इस बारिश में वो बात नहीं थी	प्रियंका केसरवानी	कहानी	65
37.	भारतीय संस्कृति	प्रियंका केसरवानी	कविता	68

❖ कविता ❖

पापा मेरी जान



पापा तुम मेरे अपने हो,
साये की तरह संग रहते हो,
तुम बिन ये जीवन सूना,
हर दुख को सुख में बदलते हो।
आँखों में रहते हो सपने बनकर,
हर मंज़िल की राह दिखाते हो,
हाथ थामकर चलते-चलते,
हर ठेस से मुझे बचाते हो।
कांधे पे मुझे बैठा कर तुम,
दुनिया की सैर कराते हो,
ये दुनिया मुझे जब डरा रही,
तुम ही इस डर से निकालते हो।
जब भी मुझसे तुम खफा हुए,
खुद को खुद ही कोसते हो,
तेरे प्यार को पाकर जाना मैंने,
तूम मेरे लिए कितना सोचते हो।
मेरी हँसी के खातिर तुमने ओ पापा,
दुःखो को भी हँस के अपनाए हो,
कोई भी दौर रहे जीवन की,
अपनी ज़िम्मेदारी खूब निभाए हो।
मेरी खुशी तुम्हारी दुआओं में पापा,
मेरा हर दर्द तुम हरने वाले हो,
मेरा हर सपना तुमने सींचा,
जैसे तुम इस बगिया के रखवाले हो।

श्री राजीव गांधी
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ विचारात्मक गद्य ❖

मुट्ठी भर मिट्टी



एक किसान मुट्ठी भर मिट्टी लेकर खेत में खड़ा होता है, वह नहीं जानता कि आसमान बरसेगा या रूठा रहेगा, फिर भी वह झुकता है और बीज ज़मीन को सौंप देता है — क्योंकि उम्मीद किसी गारंटी का नाम नहीं, यह उस भरोसे का नाम है जो हार जानने से पहले जीतना सीख चुका होता है।

नदियाँ समंदर तक पहुँचने से पहले हज़ार मोड़ लेती हैं, पत्थरों से टकराकर अपना ही एक हिस्सा वहीं छोड़ आती हैं, फिर भी कभी यह नहीं सोचतीं कि लौट जाएँ उस पहाड़ की ओर जहाँ से वे चली थीं — आगे बढ़ना उनका रास्ता नहीं, उनका स्वभाव होता है।

मैंने एक बूढ़े दर्ज़ी को देखा है, वह कतरनों को भी इतने यक़ीन से समेटता, जैसे उसे पता हो कि सबसे छोटा टुकड़ा भी किसी दिन किसी और के फटे हुए दिन को सी देगा — कुछ भी व्यर्थ नहीं जाता उस हाथ में जो देना जानता है।

हम अक्सर रोशनी को सिर्फ़ सूरज में ढूँढ़ते हैं, जबकि रोशनी उस दीये में भी होती है जो हवा से डरते हुए भी जलना नहीं छोड़ता, और उस आँख में भी होती है जो रोने के बाद भी फिर से देखना नहीं भूलती।

पंख उड़ना नहीं सिखाते, वे सिर्फ़ इतना कहते हैं — "कूद जाओ, गिरना भी एक तरह से उड़ना ही सीखना है" — और यही भरोसा एक अकेली चिड़िया को पूरे आकाश के बराबर हिम्मत दे देता है।

हर सुबह यह गवाही देती है कि रात हमेशा के लिए नहीं होती, और हर मुट्ठी मिट्टी यह गवाही देती है कि जो प्रेम से बोया जाता है, वह उगता ज़रूर है — भले उगने में पूरा एक मौसम लग जाए।

इसलिए मुट्ठियाँ बंद मत करो, बोते रहो — समय का काम है इंतज़ार करना, और तुम्हारा काम है भरोसा करते रहना, क्योंकि जो हाथ बोना नहीं छोड़ता, उसे धरती कभी खाली नहीं लौटाती।

मैंने एक मज़दूर को देखा है, उसकी हथेलियों में इतनी दरारें कि हर दरार एक साल की कहानी लगे, फिर भी शाम को जब वह अपने बच्चे को कंधे पर बिठाता है, उसकी पीठ का झुकाव शिकायत नहीं, एक इबादत लगता है।

एक दीवार जब गिरती है तो मलबा दूर तक फैलता है, पर एक बीज जब अंधेरे में मिट्टी को धक्का देता है, तो कोई गवाह नहीं होता — बस एक सुबह अचानक धरती हरे रंग में कुछ कहने लगती है।

हम गिरने को आख़िरी सच मान लेते हैं, जबकि गिरना सिर्फ़ यह बताता है कि अभी ज़मीन बाक़ी है, कि उठने के लिए अभी थोड़ी जगह बची है — हर गिरा हुआ आदमी अपने भीतर एक न उठा हुआ आदमी लिए हुए चलता है।

एक दिया आधी रात तक अपना तेल चुका देता है, पर बुझते वक़्त वह अंधेरे को दोष नहीं देता, वह जानता है —रोशनी जीती है, वह सिर्फ़ अपनी बारी देकर जाती है, ताकि कोई और दिया अगली रात यह ज़िम्मेदारी उठा सके।

सबसे मज़बूत चीज़ें हमेशा सबसे नाज़ुक जगहों से जन्मती हैं — पहाड़ से पहले एक हिलती हुई परत होती है, आदमी से पहले एक रोता हुआ बच्चा होता है जिसे कोई नहीं बताता कि यही रोना एक दिन उसकी सबसे बड़ी ताक़त बनेगा।

इसलिए जो टूटता नहीं, वह पत्थर नहीं होता — पत्थर तो सिर्फ़ रुका रहता है, जो टूटता नहीं वह पानी होता है, जो हर चोट के बाद अपना रास्ता नहीं भूलता, बस अपना आकार बदल लेता है, और आगे बढ़ जाता है।

श्री प्रदीप सिंह चारण

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

मिट्टी की बेटी



बरसों पहले की बात है। मारवाड़ के उस गाँव का नाम भला किसे याद रहता है, पर वहाँ की मिट्टी आज भी लोगों की ज़बान पर है — लाल, चिकनी, और इतनी नरम कि हाथ लगाते ही सुर छेड़ दे। उसी मिट्टी से बरतन गढ़ने वाले कुम्हारों का एक पूरा मोहल्ला था, जिसे गाँव वाले "घड़ों की गली" कहा करते थे।

उस गली में सबसे पुराना चाक भीखी कुम्हारन का था। पति बरसों पहले चल बसा था, और भीखी अकेली ही अपना चाक चलाती, मिट्टी सानती, आवा जलाती। उसकी बनाई सुराही ऐसी होती कि पानी बिना बर्फ़ के भी बर्फ़ जैसा ठंडा हो जाए। दूर-दूर के गाँवों से लोग उसके घड़े लेने आते।

भीखी की एक ही औलाद थी — बेटी, नाम पार्वती। बेटा कोई था नहीं, यही उसके सीने का सबसे गहरा घाव था। गली के दूसरे कुम्हार अपने-अपने बेटों को चाक पर बिठाते, मिट्टी सानना सिखाते, आवा जलाना सिखाते — यह हुनर बाप से बेटे को, बेटे से पोते को यूँ ही चलता आया था, सदियों से। बेटी को चाक छूने की इजाज़त कहीं नहीं थी। कहते थे, बेटी का हाथ चाक पर पड़े तो मिट्टी "बिगड़" जाती है, घड़े में दरार आ जाती है, आवा ठीक से पकता नहीं।

भीखी यह बात मानती नहीं थी, पर मानती हुई दिखती ज़रूर थी। रात को जब गली सो जाती, तब वह पार्वती को चुपके से चाक पर बिठा देती। "हाथ हल्का रख," वह कहती, "मिट्टी को धक्का मत दे, उससे बतिया, वो खुद अपना रूप बता देगी।" पार्वती के हाथ में सचमुच जादू था। बारह बरस की उमर में ही उसके गढ़े दीये ऐसे होते कि जलते वक़्त लौ काँपती नहीं थी।

पर यह सब रात के अँधेरे का राज़ था। दिन में पार्वती चूल्हे-चौके में, या मिट्टी ढोने में लगी रहती। भीखी को डर था — गली वालों को पता चला तो नाक कट जाएगी, "कुम्हारन ने बेटी को चाक पर बिठाया" — यह बात मुँह-मुँह घूमेगी, और शायद कोई उसका माल खरीदना भी बंद कर दे।

फिर वह साल आया जब बारिश ने मुँह मोड़ लिया। कुएँ सूखने लगे, आवा जलाने को लकड़ी महँगी हो गई, और गली के कुम्हारों के पास ऑर्डर तो थे पर हाथ कम पड़ने लगे। ठीक उसी बरस गाँव के ठाकुर की हवेली में बड़ा ब्याह होना तय हुआ — पूरे इलाके में निमंत्रण दिया गया था, और हवेली को दो सौ सुराहियाँ, पचास बड़े मटके और सैकड़ों दीये एक ही महीने में चाहिए थे। इतना बड़ा ऑर्डर गली के इतिहास में पहले कभी नहीं आया था।

गली के सबसे बड़े कुम्हार, हीरा काका, ने ठेका अपने नाम करवा लिया। पर बुखार में पड़ गए, और उनका इकलौता बेटा अभी सीख ही रहा था, इतना बड़ा काम अकेले संभाल नहीं सकता था। बाकी घरों के हाथ पहले से भरे थे। समय कम था, हवेली से रोज़ आदमी आकर पूछ जाता — "माल कब तक?" ठाकुर की हवेली से रिश्ता बिगड़ा तो सारी गली भुगतेगी, यह सब जानते थे।

एक शाम हीरा काका बुखार में तपते हुए भी अपनी चौपाल पर बैठे थे, और सारी गली वहाँ जमा थी, माथा पकड़े। तभी भीखी उठी और बोली, "मेरे पास एक हाथ है जो यह काम संभाल सकता है।"

गली में सन्नाटा छा गया। किसी ने पूछा, "कौन?" भीखी ने पार्वती का हाथ पकड़कर आगे कर दिया। "मेरी बेटी।"

हँसी की एक लहर दौड़ गई। किसी बूढ़े ने कहा, "कुम्हारन, बुढ़ापे में दिमाग खिसक गया क्या? बेटी का हाथ चाक पर, और वह भी ठाकुर की हवेली के लिए! अनर्थ हो जाएगा।"

भीखी ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने बस इतना कहा, "एक रात दे दो। सुबह तक जो बनेगा, वो सामने रख दूँगी। पसंद न आए तो कल से मैं भी मुँह नहीं खोलूँगी।" हीरा काका बुखार में भी मुस्कुराए। "एक रात में क्या बिगड़ेगा। दे दो मौका।"

उस रात पार्वती चाक पर बैठी। हाथ काँप रहे थे, पर मिट्टी के छूते ही सारा कँपकँपाना जाने कहाँ चला गया। भीखी बगल में दीया लिए बैठी रही, न कुछ बोली, न कुछ सिखाया — बस देखती रही। पार्वती की उँगलियों के नीचे मिट्टी उठती, झुकती, गोल होती, जैसे उसे बरसों से यही इंतज़ार था कि कोई उसे इस तरह छुए।

सुबह जब गली के लोग जमा हुए, तो चौपाल पर पंद्रह सुराहियाँ, आठ दीये और दो छोटे मटके रखे थे। इतनी सफ़ाई, इतना संतुलन, कि हीरा काका के बेटे ने भी सिर हिलाकर मान लिया कि इनमें कोई ऐब नहीं। एक बुज़ुर्ग ने सुराही उठाकर उसकी गर्दन थपथपाई, आवाज़ सुनी, और चुप रह गया।

फिर भी किसी ने खुलकर कुछ नहीं कहा। आख़िर हीरा काका ने ही कहा, "ठाकुर की हवेली में माल भेजना है, बहस करने का वक़्त नहीं। जो हाथ काम कर सकता है, वो लगे।"

अगले पंद्रह दिन गली के हर घर से मिट्टी और हाथ भीखी के आँगन में इकट्ठे होते रहे, और उस भीड़ में पार्वती का चाक भी चलता रहा — अब चोरी-छिपे नहीं, सबकी आँखों के सामने। शुरू में कुछ बूढ़ी औरतें मुँह बिचकातीं, पर जैसे-जैसे माल तैयार होकर हवेली जाता और तारीफ़ लौटकर आती, बिचकाव धीरे-धीरे पिघलने लगा।

ब्याह के दिन हवेली में जब पानी सुराहियों से निकला, मेहमानों ने कहा कि इतना मीठा, इतना ठंडा पानी उन्होंने बरसों में नहीं पिया। किसी ने पूछ लिया, "इतना बढ़िया माल किसके हाथ का है?" हीरा काका, जो अब तक तबीयत संभाल चुके थे, वहीं खड़े थे। उन्होंने एक पल रुककर जवाब दिया, "भीखी कुम्हारन की बेटी के हाथ का।"

बात हवा में तैर गई, और किसी ने कोई ऐतराज़ नहीं जताया। जिस मुँह से कभी अनर्थ का डर निकला था, अब वही मुँह तारीफ़ में खुल रहा था।

कहानी यहीं ख़त्म हो सकती थी, पर गाँव की कहानियाँ इतनी सीधी कहाँ होती हैं। कुछ बरस बाद जब भीखी बूढ़ी होकर चाक छोड़ बैठी, तो गली के बाकी घरों से भी बेटियाँ चुपके-चुपके चाक की ओर खिंचने लगीं। कोई खुलकर सिखाता, कोई अब भी रात के अँधेरे में — पर मिट्टी को अब यह फ़र्क़ समझ नहीं आता था कि उसे छूने वाला हाथ बेटे का है या बेटी का। वह तो बस इतना जानती थी कि जो हाथ उसे प्रेम से सहलाए, वही उसका असली रूप निकाल पाता है।

लोग आज भी उस गली से गुज़रते हुए कह देते हैं — "यहाँ की मिट्टी में तो जैसे बेटियों का हुनर घुला हुआ है।" पर यह भूल जाते हैं कि वह हुनर मिट्टी में नहीं, उस पहली रात में घुला था, जब एक माँ ने डर की गठरी उठाकर परे रख दी थी, और अपनी बेटी का हाथ, बस एक बार, खुलकर चाक पर रख दिया था।

श्री प्रदीप सिंह चारण

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

पिता और पुत्र: ज़िम्मेदारी और भावनाओं का अनमोल रिश्ता



जब बेटे ने पहली बार उँगली थामी,
पिता की दुनिया हँस पड़ी सुहानी।
उस नन्हे स्पर्श में विश्वास था,
जीवन को मिला नया प्रकाश था।
पिता ने अपने सपने भुला दिए,
बेटे के सपनों को पंख लगा दिए।
धूप स्वयं सही, छाँव उसे दी,
अपनी खुशियाँ उसकी हँसी में जी ली।
कभी डाँटा, कभी समझाया,
हर ठोकर पर हाथ बढ़ाया।
आँखों के आँसू छिपा लेते थे,
होठों पर मुस्कान सजा लेते थे।
पुत्र की परेशानी देखकर,
पिता अपना दर्द भुला देते थे।
"मैं हूँ न, तू चिंता मत कर",
कहकर हौसला बढ़ा देते थे।
समय बदला, बेटा जवान हुआ,
अपने सपनों में आसमान हुआ।
कभी-कभी वह भूल गया यह बात—
पिता ही थे उसकी हर शुरुआत।
अनजाने में कह बैठा कभी—
"आपने हमारे लिए किया ही क्या है?"
इन शब्दों से दिल उनका जलता,
आज वही हाथ सहारे को तरसने लगे।
अब पुत्र का धर्म महान यही—
पिता का सम्मान करे हर घड़ी।
दवा से पहले अपनापन दे,
समय से बढ़कर कोई धन न दे।
फिर एक दिन ऐसा भी आता है,
जब पिता का साया उठ जाता है।
घर वही रहता, पर खालीपन छा जाता,
हर कोना उनकी याद दिलाता।
तब समझ आती है हर सीख पुरानी,
हर डाँट लगती है अमृत की कहानी।
जिन बातों को कभी ठुकराया था,
समय ने वही सच दिखाया था।
तब दिल से आवाज़ आती है—
"पिताजी... आपकी हर बात सही थी।"
आप थे घर की मजबूत दीवार,
आपसे ही था जीवन का आधार।
इसलिए जब तक पिता साथ हैं,
उनके प्रेम का सम्मान करो।
उनके थके हुए हाथों को थामो,
उनके हर सपने का मान करो।
काश! कुछ पल और मिल जाते, कुछ वक़्त और मिल जाता।

पर प्रेम उनका कभी कम न होता।
जिस कंधे पर बैठकर दुनिया देखी,
आज वही कंधे थकने लगे।
जिस हाथ ने चलना सिखाया,
पिता हैं जीवन का वह मजबूत आधार,
जिनसे रोशन होता हर परिवार।
पुत्र का कर्तव्य, पिता का सम्मान,
यही है रिश्तों की सबसे बड़ी पहचान।

श्री विनोद कुमार
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ कविता ❖

मेरी सरकारी यात्रा (1992–2026 तक)



सन् 1992 में एक सपना लेकर, कर्तव्य-पथ पर कदम बढ़ाया था। मन में था उत्साह अपार, ईमानदारी को ही साथी बनाया था। फाइलों की दुनिया, नियमों की राह, हर दिन एक नई चुनौती आई। कभी मिली सराहना की धूप, कभी आलोचना की छाँव भी छाई। 1992 से 2007 तक ग्वालियर मेरी कर्मभूमि, जो धीरे-धीरे मेरी जन्मभूमि-सी बन गई। वहाँ मुझे केवल एक कार्यालय नहीं मिला, बल्कि अपनापन, स्नेह और परिवार-सा साथ मिला।

फिर वर्ष 2008 में नई उम्मीदों और नए सपनों को साथ लेकर मैं गोवा आई। एक नया शहर, नया कार्यालय, नए लोग... लेकिन विश्वास वही था— मेहनत कभी व्यर्थ नहीं जाती, और सचमुच, गोवा ने मुझे खुले मन से अपनाया। मेरे कार्य को पहचान मिली, मेरी मेहनत को सराहना मिली, समय-समय पर पदोन्नतियाँ मिलीं, और सबसे बढ़कर— अपनेपन का एहसास मिला।

ऑडिट की जिम्मेदारियाँ निभाते-निभाते कब वर्षों का सफर बीत गया, पता ही नहीं चला। कभी चुनौतियाँ मिलीं, कभी प्रशंसा मिली, कभी संघर्षों ने परखा, तो कभी सफलता ने मुस्कुराना सिखाया। ग्वालियर ने मुझे स्नेह दिया, गोवा ने मुझे पहचान दी। इन दोनों शहरों ने मिलकर मेरी सेवा-यात्रा को अर्थ दिया।

आज जब पीछे मुड़कर देखती हूँ, तो हर पल एक कहानी-सा लगता है। हर चेहरा, हर मेज़, हर फ़ाइल, हर याद आज भी दिल के बहुत करीब है।

मार्च 2029 अब दूर नहीं, जब इस कार्यालय को अंतिम प्रणाम कहना होगा। फिर मेरी उपस्थिति रजिस्टर फ़ाइल में नहीं होगी, पर मेरी यादें इन गलियारों में शायद हमेशा मुस्कुराती रहेंगी।

कार्यालय से मेरा साथ भले ही छूट जाएगा, लेकिन यहाँ बिताए हर पल का एहसास मेरे जीवन की सबसे अमूल्य पूँजी रहेगा। इन खट्टी-मीठी यादों को मैं जीवन भर अपने हृदय में संजोकर रखूँगी।

1992 से 2026 तक का यह सफर मेरे लिए केवल एक नौकरी नहीं, मेरे जीवन की सबसे सुंदर कहानी है। जब अंतिम बार इस कार्यालय से बाहर निकलूँगी, तो होंठों पर मुस्कान होगी, आँखों में कुछ नमी होगी, और दिल में बस एक ही भावना— "धन्यवाद"।

धन्यवाद ग्वालियर, जिसने मुझे अपनापन दिया। धन्यवाद गोवा, जिसने मुझे सम्मान, पहचान और आत्मविश्वास दिया। अलविदा केवल कार्यालय को कहूँगी, इन यादों को नहीं। ये खट्टी-मीठी स्मृतियाँ मेरी जीवन-यात्रा के अंत तक मेरे साथ चलती रहेंगी।

सुश्री एस. जयश्री

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

नए कीर्तिमान बनाते जाना



कर्तव्य पथ पर बढ़ते जाना, कितनी भी बाधा क्यों ना आए
यात्रा पूरी होने तक, कोई पथ विचलन ना आए
धीर बन गंभीर बन, आगे बढ़ते जाना
नए कीर्तिमान बनाते जाना
किंतु रहे यह सदा स्मरण, एक पड़ाव पूरा होने पर
जीवन में जड़ता न आए,
नया लक्ष्य निर्धारित कर आगे बढ़ते जाना
नए कीर्तिमान बनाते जाना
ए. आई. के युग मे तुमको आई. बनना है
और ए. बनने से बचना है
अपनी बुद्धि और विवेक जगाना है
कृत्रिमता से दूर रहकर, मानवीयता को अपनाना है।
सच्चाई ही है अच्छाई यह बोध सदा रखते जाना।
सच्चाई से जुडते जाना, पथ पर बाधा कितनी भी आए,
धीर बन गंभीर बन आगे बढ़ते जाना,
नए कीर्तिमान बनाते जाना
अपने श्रम से, अपने सत्य से,
हर विश्वास निभाते जाना।
स्वयं बढ़ो और ले साथ सभी को,
नए कीर्तिमान बनाते जाना।

श्री शीवेंद्र सिंह
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖



चमकती चाँदनी की शीतलता

चमकती चाँदनी की शीतलता, या यूँ कहें कम हो गई तपस, सूरज की पूर्ण विदाई के बाद। या यूँ कहें बढ़ गई सुगंध, महुआ के फूलों को छूकर आती हवा से। या यूँ कहें थम गया जीवन, सुबह से शाम तक की व्यस्तता के बाद। छत पर खड़े हम, देखते रहे, अनंत को निहारते हुए सोचते रहे— तारों की चमक, चाँद की चाँदनी, महुए की सुगंध, हवाओं की सरसराहट... बस अहसास करा रही थी, चमकती चाँदनी की शीतलता।

श्री आशीष वर्मा
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

ज़िम्मेदारी का बोझ

अगर माँगता ज़िंदगी अंकों में, तो मुराद होती बस माँ के अंक तक, उसके बाद ज़िंदगी घिसटती है। थोड़ी और लेने को कहता तो, लड़कपन ही काफ़ी था, उसके बाद तो ज़िंदगी रिसती है। लालच भी होती तो, अल्हड़ यौवन ही अंत था, उसके बाद ताउम्र सिसकती है। ज़िम्मेदारी के अहसास, सीखने की कवायद खत्म कर देती है, आपकी ज़िंदगी जलती है, रोशन करने कुल को। अपने ऊपर आपके अधिकार, खत्म कर देती है। एक साल... काट लिया मैंने...

श्री आशीष वर्मा
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ कविता ❖

छोड़ा कष्ट



इस जलाती हुई धूप से, मैंने पूछा- कहो कितना तपाओगी? किसी को छोड़ आने का कष्ट है, या शौक है, जो हमें भी तड़पाओगी? ये बदन तपती मिट्टी सी प्रतीत होती है, और मन जल सा वाष्पित हो गया है, चारों ओर शोले हैं, उग्र ऊष्मा से व्यथित हैं, खग-पशु भी विचलित हैं, स्वघोषित महान मनुज भी आज शोषित है। और कहो कितना तपाओगी? मन में उठे इस प्रश्न को, जान गई प्रकृति, जो जननी है हमारी। और इस कुपित प्रकोप की, उसने पहले अनसुना किया, फिर, वापस आ सुना दिया... मेरा तड़पाना दिखा, पर तेरा क्या? स्वघोषित महान मनुज तेरा क्या? ये पेड़ का कट्ना, पहाड़ों का छटना, कृत्रिम धुओं से बादल बनाना, वर्षा के जगह अम्लता को चुनना, भू में जल संचयन के जगह कृत्रिम पात्र में जल संजोना, अनचाहा उष्म द्वीप बनाना- ये सब तुमने माँगा था! साथ में कुछ तो मिलेगा ही, धूप तो एक बानगी है, अभी तो प्रलय भी सजेगा।

श्री आशीष वर्मा

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

होते जाओगे सब से दूर



हे, औरों के सब भेद के ज्ञाता! क्या खुद को तुम जानते हो? हरेक के लिए है एक चेहरा, असली चेहरा पहचानते हो? दशानन नहीं तुम मानव हो, इतने चेहरे रख पाओगे? होते जाओगे सब से दूर, तो साथ किसे फिर पाओगे।।

हर बात में अर्थ नहीं होता, हर बात पे तर्क नहीं होता, क्रिया ही सब की जननी है, कुछ बात-बेबात नहीं होता। शब्दों के छूटे बाणों को, फिर वापस कैसे लाओगे? होते जाओगे सब से दूर, तो साथ किसे फिर पाओगे!

कर्ण दिए हैं सुनने को, हर सुनी हुई को मत मानो। जैसा कोई और नहीं तुम, अपने स्वयं को पहचानो। अपनी जिह्वा से बहरे हो, क्या औरों को सुन पाओगे? होते जाओगे सब से दूर, तो साथ किसे फिर पाओगे?

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ममता, मत्सर, माया, तृष्णा, अविवेक विकारों को जानो। तुम से कम नहीं चतुर-निपुण, तुम जैसे ही हैं और, नर में नारायण पहचानो। हाथों में लेकर हाथ चलें, हम साथ चलें तो काम बनें। तेरे-मेरे के फेरे में, तुम तिनके से बिखर जाओगे। होते जाओगे सब से दूर, तो साथ किसे फिर पाओगे?

श्री सुनील

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

अजीब दौर



सच कहूँ तो जानता हूँ,
मेरी कोई अहमियत नहीं,
फिर भी कुछ लोगों को मैंने,
बहुत अनमोल मान रखा है।
इस मतलब की दुनिया में,
जहाँ सब अपने लिए जीते हैं,
मैंने कुछ चेहरों को,
अपनी जान मान रखा है।
ज़िंदगी आज ऐसे दोराहे पर आकर खड़ी है,
कि तेज़ दौड़ूँ, तो अपने पीछे छूट जाते हैं,
और अगर रास्ते में कहीं थककर गिर जाऊं,
तो वही अपने, मुझे अकेला छोड़ जाते हैं।
अब न जीतने की कोई खुशी बची है,
न हारने का कोई गम,
बस इन रिश्तों के धागों में,
खुद ही उलझता जा रहा हूँ।
पता है कि मेरे होने या न होने से,
किसी को फर्क नहीं पड़ता,
फिर भी कुछ अपनों के लिए,
मैं खुद को भूलता जा रहा हूँ।

श्री राज
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

हकीकत का आईना



मुझे दुनिया भर में मशहूर होने की,
कोई चाहत नहीं थी,
मैं तो बस तुम्हारी ज़िंदगी का,
एक हिस्सा बनना चाहता था।
दुनिया की तारीफों से,
मुझे क्या लेना-देना,
मैं तो बस तुम्हारे सुकून की,
वजह बनना चाहता था।
पूरी ज़िंदगी इसी गलतफहमी में गुज़ार दी मैंने,
कि शायद मेरे रहने से तुम्हें खुशी मिलती है,
तुम्हारे चेहरे पर मुस्कान लाने के लिए,
मैंने न जाने अपने कितने ही सपनों को मार दिया।
पर एक दिन जब वक्त ने असलियत का शीशा दिखाया,
तो वह सच देखकर मेरा दिल अंदर तक टूट गया,
जिसकी आँखों में आँसू देखकर मुझे नींद नहीं आती थी,
उसे मेरी तकलीफ का कभी कोई एहसास ही नहीं हुआ।
जिनकी ज़िंदगी सँवारने के लिए मैंने अपना सब कुछ लुटा दिया,
आज पता चला... उनकी कहानी में,
मेरा तो कभी कोई ज़िक्र ही नहीं था।

श्री राज
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ संस्मरण/लेख ❖

हिन्दी से मेरा परिचय



मैं बंगाली हूँ और मेरा जन्म कोलकाता मे हुआ है। मेरी पढ़ाई-लिखाई पश्चिम बंगाल के एक साधारण से स्कूल मे हुई है जहां अंग्रेज़ी छोड़ के सारे विषय बांग्ला मे पढ़ाये जाते थे। मैं साधारण छात्र था, लेकिन साहित्य से मेरा लगाव बचपन से था। मैं बाहर खेलने जाने के बजाय घर मे बैठ के कहानियों की किताबें पढ़ना ज़्यादा पसंद करता था। बारहवीं कक्षा मे विज्ञान का छात्र था पर मौका मिलते ही कॉलेज मे दाखिले के समय अंग्रेज़ी को चुन लिया था।

मेरे घर मे काफी पहले से - (रामानंद सागर के रामायण सीरियल के समय से) कलर टेलिविजन था। डीडी वन पर शुक्रवार हिन्दी फिल्में दिखाई जाती थी और मैं बड़े चाव से हिन्दी फिल्में देखता था। मैं पौराणिक कहानियों पर आधारित सीरियल भी देखता था। पता नहीं कैसे मुझे सुनते सुनते हिन्दी आ गया। शायद मैं छोटा था और उस समय दिमाग विकसित हो रहा था और इसी लिए मुझे वो लैंग्वेज आ गया। अब गोवा मे पंद्रह साल रहने के बावजूद मुझे कोंकणी नहीं आई। मेरा ज्ञान "तुज़े नाव कीदें" और "तू खोय रावता" तक सीमित रह गया। कोई पूछता है तो बोलता हूँ "मातसे उलयता" (कोंकणी मे जिसका अर्थ है "थोड़ा बहुत बोल लेता हूँ"), जो की सरासर झूठ है। वो मातसे की मात्रा सूक्ष्मदर्शक यंत्र मे देखने लायक है। हिन्दी जैसी एक समृद्ध भाषा से मेरा परिचय कराने और उसे सीखने मे मेरी मदद करने के लिए मैं हमेशा टेलिविजन और बॉलीवुड का आभारी रहूँगा। हिन्दी भाषा के माध्यम से ही मेरा परिचय, कबीर, दिनकर, बच्चन, गोंडवी, दुष्यंत जैसे कवियों की रचनाओं से हुआ।

दसवीं मे मेरे पढ़े गए विषयों मे हिन्दी शामिल नहीं थी, इसीलिए मुझे सेवा एक शर्त के अनुसार औपचारिक तौर पे हिन्दी सिखनी पड़ी। गृह मंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग अ-हिन्दी भाषी अधिकारियों को प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ इत्यादि कोर्स करवाता है। मुझे प्राज्ञ कोर्स करवाया गया था, जो एडवांस्ड कोर्स है। इस वजह से अब मेरे पास हिन्दी जानने का सर्टिफिकेट (प्रमाणपत्र) भी है।

अदम गोंडवी की एक कविता है— "तुम्हारी फाइलों मे गाँव का मौसम गुलाबी है, मगर ये आंकड़े झूठे हैं, ये दावा किताबी है।" ये पंक्तियाँ मेरे हिन्दी ज्ञान को बखूबी चित्रित करती है। दर असल रट्टा मार के कोई भाषा का प्रमाणपत्र हासिल करना, और उस भाषा को सही बोल पाना और उसे कागज़ पर उतारना दो अलग बातें है। मेरा हिन्दी व्याकरण का ज्ञान शून्य है। और मैं जब हिन्दी बोलता हूँ उसमे बंगाली टोन आ जाता है जिसे काफ़ी कोशिश के बाद भी हटा नहीं पाता।

बहुत ध्यान से बोलने पर थोड़ा ठीक बोल लेता हूँ। ऊपर से हिन्दी मे काफी शब्द के बाद आया/आयी गया/गयी मे हमेशा गलती करता हूँ। ये गलती चीजों बारे मे कहते वक़्त होती है, मसलन मैंने किताब खरीदा है, या खरीदी है। खुली खिड़की से धूप आ रही है या खुली खिड़की से धूप आ रहा है। ऐसी बातों में कन्फ्यूज हो जाता हूँ। और एक दोष जो मैंने अपने हिन्दी सुनते वक़्त नोटिस किया है वो है की मैं खुद के लिए मैं की बजाय हम इस्तेमाल करता हूँ। हम वहाँ गए थे, हमने खाना खा लिया है, हम सोने जा रहें हैं इत्यादि। हिन्दी के मामूली से शब्द के वर्तनी भी मुझे याद नहीं रहते। मैं लैपटॉप मे इंग्लिश मे टाइप करता हूँ और कम्प्यूटर मुझे वर्तनी के विकल्प दिखाता है। मैं विकल्प देख कर अपना शब्द चुन लेता हूँ। वर्तनी मे खासकर छोटी और बड़ी ई और उ की मात्रा मुझे परेशान करती है।

लेकिन मैं अपने आप को बेहतर बनाने का प्रयास कर रहा हूँ। आशा है कुछ और सालों में मैं सही हिन्दी अच्छे उच्चारण के साथ बोल पाऊँगा और बिना मदद के सही वर्तनी लिख पाऊँगा।

श्री राकेश दास

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ यात्रा-वृतांत ❖

मुंबई की यात्रा : प्रशिक्षण से बढ़कर एक मानवीय अनुभव



जीवन में कुछ यात्राएँ केवल एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने का माध्यम नहीं होतीं, बल्कि वे ऐसे अनुभवों और व्यक्तित्वों से परिचित कराती हैं, जो वर्षों तक हमारी स्मृतियों में बसे रहते हैं। मेरी मुंबई यात्रा भी ऐसी ही एक अविस्मरणीय यात्रा रही।

मुझे भारतीय लेखा एवं लेखा परीक्षा विभाग के क्षेत्रीय प्रशिक्षण संस्थान (RTI), मुंबई में पाँच दिवसीय प्रशिक्षण में भाग लेने का अवसर मिला। उत्साह के साथ मैं मुंबई पहुँची और वहाँ से टैक्सी लेकर बांद्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स स्थित आरटीआई के लिए रवाना हुई। किंतु नियति ने इस यात्रा की शुरुआत ही एक अप्रत्याशित घटना से की।

आरटीआई के निकट किसी चुनावी रैली के कारण यातायात पूरी तरह अवरुद्ध था। टैक्सी आगे नहीं जा सकती थी और मैं भी असमंजस में खडी थी कि समय पर प्रशिक्षण स्थल तक कैसे पहुँचा जाए। वहाँ ड्यूटी पर तैनात एक पुलिस अधिकारी से मैंने विनम्रतापूर्वक अनुरोध किया कि मैं गोवा से विशेष रूप से प्रशिक्षण में भाग लेने आयी हूँ और समय पर पहुँचना मेरे लिए अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने परिस्थिति समझते हुए मुझे वहीं प्रतीक्षा करने की सलाह दी।

इसके बाद मैंने आरटीआई में फोन कर अपनी स्थिति बताई। कुछ ही समय में संस्थान के सुरक्षा कर्मी वहाँ पहुँचे और उन्होंने भीड़ एवं अवरोधों के बीच से मुझे सुरक्षित प्रशिक्षण संस्थान तक पहुँचाया। उनकी तत्परता और सहयोग ने मन में यह विश्वास जगा दिया कि कठिन परिस्थितियों में भी संवेदनशील लोग हमारी सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

पाँच दिनों का प्रशिक्षण अत्यंत ज्ञानवर्धक रहा। इसी दौरान अनेक सह-प्रशिक्षुओं से परिचय हुआ, जिनमें से कुछ से अच्छी मित्रता भी हो गई। इन सबमें एक नाम आज भी मेरे मन में विशेष सम्मान और स्नेह के साथ अंकित है—श्रीमती मूर्ति, जो रेलवे लेखा परीक्षा में वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी (Senior Audit Officer) थीं। वे अत्यंत सरल, स्नेही और सहृदय व्यक्तित्व की धनी थीं। अल्प परिचय के बावजूद उन्होंने मुझे सदैव अपनेपन का अनुभव कराया।

एक दिन चाय के अवकाश के दौरान बातचीत करते हुए मैंने उनसे सहज ही उल्लेख किया कि गोवा लौटने के लिए मेरी रेल टिकट की अब तक पुष्टि नहीं हुई है और मेरी प्रतीक्षा सूची संख्या 97 है। मुझे लगा कि यह केवल एक सामान्य बातचीत है, परंतु उन्होंने तुरंत कहा, "आप अपने टिकट का विवरण मुझे दीजिए, मैं देखती हूँ।"

प्रशिक्षण का अंतिम दिन आ गया। उसी शाम मुझे गोवा के लिए ट्रेन पकड़नी थी। टिकट की पुष्टि को लेकर मन में स्वाभाविक चिंता थी। स्टेशन जाने की तैयारी के बीच मैं बार-बार अपने मोबाइल पर टिकट की स्थिति देख रही थी। तभी अचानक श्रीमती मूर्ति का फोन आया। उनकी आवाज़ में वही आत्मीयता थी। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, "आपकी टिकट कन्फर्म हो गई है।"

उनकी यह सूचना सुनकर मेरे मन का सारा तनाव एक क्षण में दूर हो गया। उस समय मेरे मन में उनके प्रति जो कृतज्ञता का भाव था, उसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। आज भी सोचती हूँ कि संसार में ऐसे लोग बहुत कम मिलते हैं, जो किसी अनजान व्यक्ति की सहायता के लिए भी पूरी निष्ठा से प्रयास करें। उनका यह स्नेह और सहयोग मेरे लिए किसी अनमोल उपहार से कम नहीं था।

मुंबई की इस यात्रा ने मुझे केवल प्रशिक्षण का ज्ञान ही नहीं दिया, बल्कि यह भी सिखाया कि जीवन की सबसे बड़ी पूँजी अच्छे और संवेदनशील लोग होते हैं। वर्षों बीत जाने के बाद भी जब कभी मुंबई की वह यात्रा याद आती है, तो आरटीआई का प्रशिक्षण, चुनावी रैली की वह अप्रत्याशित स्थिति और सबसे बढ़कर श्रीमती मूर्ति की आत्मीयता मन को कृतज्ञता से भर देती है।

सच ही कहा गया है—यात्राएँ केवल नए स्थानों से नहीं, बल्कि नए और नेक इंसानों से भी हमारा परिचय कराती हैं। मेरी मुंबई यात्रा इसका एक सुंदर उदाहरण है।

सुश्री शोभा हरिकुमार

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

आवाज़



हो अगर अन्याय, तो आवाज़ उठानी चाहिए,
ख़ामोश लबों में भी चिंगारियाँ सुलगनी चाहिए।
चाहिए कि हम उन्हें उखाड़ फेंकें इस जहाँ से,
पर इसके लिए हौसले फ़ौलाद होने चाहिए।
आज के इस डिजिटल युग में, साहब, इंकलाब कौन करे?
बस रीलों में हम अपना रोष प्रकट कर रहे।
वो भी सयाने बहुत हैं, उनको भी ये है पता,
कोई नहीं यहाँ भगत सिंह, जो फाँसी पर लटक सके।
वो हमे बाँट रहे है नस्लों मे की कही हम एक न हो जाए,
उनकी ये चाल हमे समझनी चाहिए,
फिर भी वो कहते है, की वो हमारे रहनुमा है,
ऐसे रहनुमाओं से तो हमें ही बचना चाहिए।
फिर से कोई भगत सिंह और गाँधी होना चाहिए,
सत्य और साहस का फिर से दीप जलना चाहिए।
निकलो घरों से, और इंकलाब कुछ ऐसे करो,
कि हर आवाज़ का असर इस ज़माने पर होना चाहिए।
कुछ न कर सको तो बस तुम इतना करो,
की जो लड़ रहे, उनका हौसला तुम भी बनो,
न उठा सको आवाज़ तुम तो, उनकी आवाज़ मे दम भरो,
हर हाल मे ये लड़ाई हमे जितनी चाहिए।

श्री राजीव गांधी
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

जड़ों की गूंज और एकांत का सफ़र



बिहार की कच्ची सड़कों से निकलकर, पच्चीस साल का एक युवा जब महालेखाकार कार्यालय (AG Office), गोवा की बड़ी और व्यस्त दुनिया में पहुँचा, तो उसके पास बड़ी-बड़ी डिग्रियां नहीं, बल्कि संघर्ष का तजुर्बा और संस्कारों की गहरी नींव थी। यह सफर केवल एक राज्य से दूसरे राज्य का नहीं था; यह सफर था अपनी मिट्टी से दूर होकर, खुद को एक अजनबी भीड़ में स्थापित करने का।

गोवा के समंदर किनारे जब भी वह फुरसत के पलों में बैठता, तो लहरों के शोर के बीच उसे अपने गाँव का वह सुकून याद आता जो अब बहुत पीछे छूट गया था।

वह जानता था कि गाँव की वे दीवारें और गलियां आज भी वहीं हैं, लेकिन अब उनमें उसकी हँसी नहीं गूंजती। ज़िम्मेदारियों ने उसे उस घर से इतना दूर कर दिया था कि अब वह बस यादों में ही जीवित था।

दफ्तर की भागदौड़ ने उसके जीवन का अर्थ ही बदल दिया था। हर दिन एक मशीन की तरह शुरू होता और उसी तरह खत्म हो जाता। यह सिर्फ उसकी कहानी नहीं थी, बल्कि हर उस इंसान की कहानी थी जो अपनों की खुशी के लिए अपना घर छोड़ देता है। उसे लगता जैसे—

"सुबह निकलता हूँ तो रात घर आता हूँ, अपनों के लिए ही खुद को थकाता हूँ... पैसे तो हर महीने आते और चले जाते हैं, लेकिन बीते हुए दिन कभी लौटकर नहीं आते हैं।"

उसे अक्सर यह सोचकर डर लगता कि कहीं ज़िन्दगी कमाने में पूरी उम्र न निकल जाए, और जीने का सपना अधूरा ही रह जाए। जिस दफ्तर में वह काम करता था, वहाँ की दुनिया गाँव की सादगी से बिल्कुल उलट थी। वहाँ एक अजीब सी विडंबना थी। कुछ सहकर्मी काम की बारीकियों से कोसों दूर थे, लेकिन अपनी कमियों को छिपाने के लिए वे टूटी-फूटी और भारी-भरकम अंग्रेजी शब्दावली का जाल बुनते थे। उनका मानना था कि भाषा का दिखावा ही उनकी श्रेष्ठता का प्रमाण है।

वह युवा अपनी मेज पर बैठकर चुपचाप यह सब देखता। इन खोखले दिखावों के बीच उसे अक्सर ओशो की वह बात याद आती कि—"सच्चा समझदार व्यक्ति कभी चालाकी या हेरा-फेरी नहीं करता। चालाकी सिर्फ उन लोगों का दिखावा है जो अंदर से नासमझ होते हैं। जिसके पास सच्ची समझ होती है, वह इंसान हमेशा सरल और सादा होता है।"

उसने कभी उस शोर का हिस्सा बनने या उन पर व्यंग्य कसने की कोशिश नहीं की। वह समझ चुका था कि ज्ञान का असली रूप काम की गुणवत्ता और सरलता में झलकता है, अंग्रेजी के अहंकार या चालाकी के मुखौटों में नहीं। वह उन डिंगें हांकने वालों को बस एक शांत मुस्कान के साथ नज़रअंदाज़ कर देता और अपनी फाइलों में उलझ जाता।

इस दिखावटी दुनिया में उसे जो चीज़ भीतर से मज़बूत रखती थी, वे थे उसके गाँव के संस्कार और बाबूजी के डांट-दुलार की वे अनमोल यादें, जिन्होंने उसे हमेशा ज़मीन से जोड़े रखा था। दफ्तर के तनाव और अकेलेपन के बीच, जब भी मन भारी होता, तो उसके भीतर अपने आप वो पारंपरिक धुनें बजने लगतीं। कभी "जुग जुग जियसु ललनवा..." जैसे सोहर की मिठास, तो कभी "आजु मिथिला नगरिया निहाल सखिया." जैसे भजनों की पवित्रता उसे अपनी मिट्टी से जोड़े रखती। ये गीत केवल शब्द नहीं थे; ये वो अदृश्य धागे थे, जो उसे इस अजनबी शहर की चकाचौंध में भी कभी भटकने नहीं देते थे।

दफ्तर की राजनीति, तानों और दिखावे के बीच, उसने अपने लिए सबसे कठिन लेकिन सबसे सुरक्षित रास्ता चुन लिया था—मौन और फासले का रास्ता। उसे अक्सर बशीर बद्र का वह शेर याद आता:

> ***"बड़े लोगों से मिलने में हमेशा फ़ासला रखना,***
> ***जहाँ दरिया समुंदर से मिला दरिया नहीं रहता।"***

उसने समझ लिया था कि इस 'समुंदर' जैसी दिखावटी दुनिया में घुल-मिल जाने का मतलब है अपने 'दरिया' जैसे वजूद को खो देना। इसलिए उसने भीड़ में रहकर भी तन्हा होना सीख लिया था। वह जानता था कि जो लोग शोर मचाते हैं, उनका ध्यान अक्सर अपनी मंजिल से भटक जाता है। उसके लिए हर दर्द का शोर नहीं होता, कुछ घाव भीतर ही भीतर साँस लेते हैं, जिन्हें मौन बनकर ही सहना पड़ता है।

उसकी यह खामोशी उसकी मजबूरी नहीं, बल्कि उसका सबसे बड़ा हथियार थी। उसे किसी को यह साबित करने की कोई लालसा नहीं थी कि वह क्या जानता है और क्या नहीं। उसका लक्ष्य दफ्तर की फाइलों और दिखावटी बातों से कहीं आगे था। वह समझ गया था कि मंजिल से पहले खुद को पाना है, और एकांत ही उसका सबसे सच्चा हमसफर है। इसी शांत संकल्प के साथ, वह हर नई सुबह एक नई शुरुआत करता—खामोश, दृढ़ और अपनी जड़ों से जुड़ा हुआ।

श्री राज

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ यात्रा-वृतांत ❖

दिल्ली से लक्षद्वीप: एक यात्रा वृत्तांत



कुछ यात्राएँ केवल हमें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती हैं, लेकिन कुछ यात्राएँ हमारे भीतर एक नया संसार खोल देती हैं। मेरी दिल्ली से लक्षद्वीप की यात्रा भी ऐसी ही रही। इस यात्रा का उद्देश्य केवल घूमना नहीं था। मैं वहाँ डीप डाइविंग (स्कूबा डाइविंग) का एडवांस कोर्स करने गई थी। मुझे लगता था कि यह केवल एक एडवेंचर होगा, लेकिन वहाँ पहुँचकर महसूस हुआ कि समुद्र की गहराइयों में केवल रोमांच ही नहीं, बल्कि जीवन का एक मौन दर्शन भी छिपा है।

दिल्ली की व्यस्त सड़कों, धुएँ, हॉर्न और तेज़ रफ्तार जीवन से निकलकर जब मैंने कोच्चि के लिए उड़ान भरी, तो मन में उत्साह के साथ हल्की-सी घबराहट भी थी। कोच्चि से लक्षद्वीप की छोटी-सी उड़ान मेरे जीवन की सबसे सुंदर हवाई यात्राओं में से एक रही। जैसे-जैसे विमान अरब सागर के ऊपर आगे बढ़ रहा था, नीचे का दृश्य बदलने लगा। अथाह नीले समुद्र के बीच छोटे-छोटे हरे द्वीप किसी कलाकार की रंग-पट्टी पर उकेरी गई आकृतियों जैसे लग रहे थे। उनके चारों ओर फैला फ़िरोज़ी रंग का लैगून और सफेद रेत की पतली पट्टियाँ प्रकृति की अद्भुत कारीगरी का प्रमाण थीं।

विमान से उतरते ही सबसे पहले नमकीन समुद्री हवा ने मेरा स्वागत किया। हवा में एक अलग ही ताजगी थी। वहाँ न महानगरों जैसी भागदौड़ थी, न अनावश्यक शोर। लहरों की आवाज़ और नारियल के पेड़ों की सरसराहट जैसे हर आगंतुक से कह रही थी—"धीरे चलो, यहाँ समय प्रकृति की गति से चलता है।"

कुछ ही दिनों में मैंने महसूस किया कि लक्षद्वीप केवल सुंदर समुद्र तटों का समूह नहीं है, बल्कि एक ऐसी जीवनशैली का उदाहरण है जहाँ प्रकृति और मनुष्य एक-दूसरे के पूरक हैं। स्थानीय लोग अत्यंत सरल, विनम्र और आत्मसम्मान से भरे हुए थे। यहाँ के अधिकांश लोग समुद्र से अपना जीवनयापन करते हैं, इसलिए वे उसे केवल संसाधन नहीं, बल्कि परिवार का सदस्य मानते हैं। बच्चों को बचपन से ही सिखाया जाता है कि समुद्र को स्वच्छ रखना उनकी जिम्मेदारी है।

मैंने देखा कि कई घरों के बाहर छोटे-छोटे बगीचे थे, जिनमें नारियल, केले, पपीते और स्थानीय पौधे लगे थे। प्लास्टिक का उपयोग बहुत कम दिखाई देता था। समुद्र तटों पर कहीं भी कूड़े के ढेर नहीं थे। लोग पर्यावरण संरक्षण को किसी अभियान की तरह नहीं, बल्कि अपने दैनिक जीवन का स्वाभाविक हिस्सा मानते थे।

डीप डाइविंग प्रशिक्षण के तीसरे दिन मैं समुद्र तट पर बैठकर सूर्यास्त के दृश्य कैमरे में कैद कर रही थी। वहीं बातचीत करते-करते मैं अपना छोटा बैकपैक और पानी की बोतल भूल गई। जब कुछ देर बाद

मुझे इसका ध्यान आया, तो मैं घबराकर वापस उसी स्थान पर पहुँची। वहाँ एक बुज़ुर्ग स्थानीय मछुआरे और उनका लगभग दस-बारह वर्ष का पोता बैठे थे। उन्होंने मुझे देखते ही मुस्कुराकर मेरा बैग आगे बढ़ा दिया। उन्होंने कहा, "आप शायद इसे भूल गई थीं। हमने सोचा, जब आप लौटेंगी तो यहीं मिल जाएगा।" मैंने उनका धन्यवाद किया और आग्रहपूर्वक कुछ पैसे देने चाहे। वे मुस्कुरा दिए। "बेटी, मेहमान का सामान लौटाने के पैसे नहीं लिए जाते। समुद्र हमें रोज़ देता है, हम भी थोड़ा लौटाना सीख गए हैं।"

डीप डाइविंग प्रशिक्षण का पहला दिन मेरे लिए उत्साह और घबराहट दोनों से भरा था। प्रशिक्षकों ने सबसे पहले हमें यह समझाया कि समुद्र में हम पर्यटक नहीं, अतिथि हैं। जब पहली बार मैंने ऑक्सीजन सिलेंडर के साथ धीरे-धीरे समुद्र की गहराई में उतरना शुरू किया, तो ऐसा लगा मानो किसी दूसरे ग्रह पर पहुँच गई हूँ। ऊपर लहरों का शोर था, लेकिन कुछ ही मीटर नीचे सब कुछ शांत हो गया। केवल अपनी साँसों की नियमित आवाज़ सुनाई दे रही थी।

समुद्र की उस नीरव गहराई में तैरते हुए मेरे मन में बार-बार एक ही प्रश्न उठ रहा था—आख़िर इस विशाल संसार को संतुलित बनाए रखने वाली शक्ति क्या है? यहाँ न कोई सरकार है, न कोई लिखित संविधान, न न्यायालय, न सीमाएँ, न भाषाएँ और न ही किसी प्रकार का सामाजिक या राजनीतिक भेदभाव। फिर भी करोड़ों वर्षों से यह संसार बिना किसी बड़े संघर्ष के निरंतर गतिमान है। जितना अधिक मैं समुद्र को देखती गई, उतना ही मुझे महसूस हुआ कि प्रकृति ने "अनेकता में एकता" (Unity in Diversity) का सबसे सुंदर और सबसे प्राचीन उदाहरण समुद्र के भीतर ही रचा है।

प्रवाल भित्तियों को ही देखिए। दूर से देखने पर वे केवल रंग-बिरंगी चट्टानों जैसी प्रतीत होती हैं, लेकिन वास्तव में वे असंख्य सूक्ष्म कोरल पॉलीप्स के सामूहिक श्रम का परिणाम हैं। मैंने क्लाउन फिश और समुद्री एनीमोन का अद्‌भुत संबंध देखा। एनीमोन उसे सुरक्षा देता है और बदले में क्लाउन फिश उसे साफ़ रखती है। यह संबंध न तो स्वार्थ पर आधारित है और न ही प्रभुत्व पर, यह परस्पर विश्वास और सहयोग का संबंध है। समुद्र ने मुझे सिखाया कि वास्तविक शक्ति किसी पर अधिकार जमाने में नहीं, बल्कि एक-दूसरे को सुरक्षित रखने में है।

थोड़ी दूर पैरट फिश लगातार मृत कोरल और शैवाल को कुतर रही थी। समुद्री घास—सीग्रास—अनेक छोटी मछलियों के लिए नर्सरी का काम करती है और वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर जलवायु परिवर्तन को कम करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। समुद्री कछुए को शांत गति से तैरते देखकर मुझे लगा मानो वह समय से परे किसी संसार का निवासी हो। वह न किसी से प्रतिस्पर्धा कर रहा था, न किसी को पीछे छोड़ने की कोशिश।

मुझे सबसे अधिक आश्चर्य इस बात पर हुआ कि समुद्र में विविधता कभी विभाजन का कारण नहीं बनती। प्रकृति ने प्रत्येक के लिए एक स्थान, एक भूमिका और एक उद्देश्य निर्धारित किया है। यही विविधता समुद्र की शक्ति है, उसकी कमजोरी नहीं। यहीं मुझे भारत की याद आई। हमारा देश भी भाषाओं, संस्कृतियों, धर्मों, परंपराओं, वेशभूषाओं और जीवन-शैलियों की असंख्य धाराओं से मिलकर बना है। जिस प्रकार समुद्र में प्रत्येक जीव अपनी विशिष्टता बनाए रखते हुए भी पूरे पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा है, उसी प्रकार एक राष्ट्र तभी सशक्त बनता है जब उसकी विविधताएँ संघर्ष का कारण बनने के बजाय सहयोग का आधार बनें।

समुद्र ने मुझे यह भी सिखाया कि शांति का अर्थ केवल युद्ध का न होना नहीं है। वास्तविक शांति वह है जहाँ प्रत्येक जीव दूसरे के अस्तित्व का सम्मान करे, जहाँ संसाधनों का संतुलित उपयोग हो, जहाँ शक्ति का प्रयोग संरक्षण के लिए हो, शोषण के लिए नहीं। आज दुनिया जलवायु परिवर्तन, समुद्री प्रदूषण, प्लास्टिक कचरे और जैव-विविधता के क्षरण जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। समुद्र हमें सिखाता है कि सहयोग प्रतिस्पर्धा से अधिक शक्तिशाली है, संतुलन विकास से अधिक स्थायी है और विविधता किसी भी सभ्यता की सबसे बड़ी संपत्ति होती है।

डाइविंग के दौरान एक स्थान पर मैंने समुद्र तल में प्लास्टिक का एक छोटा-सा टुकड़ा फँसा हुआ देखा। वह दृश्य मुझे भीतर तक विचलित कर गया। उस दिन समझ आया कि पर्यावरण संरक्षण केवल भाषणों या अभियानों का विषय नहीं है। यह उस बोतल से शुरू होता है जिसे हम सड़क पर नहीं फेंकते, उस कपड़े के थैले से शुरू होता है जिसे हम प्लास्टिक की जगह चुनते हैं।

जब मैं दिल्ली लौटी, तो शहर वही था—व्यस्त, तेज़ और शोर से भरा। लेकिन मैं पहले जैसी नहीं थी। मैंने अपने जीवन में कुछ छोटे लेकिन स्थायी परिवर्तन किए—एकल-उपयोग प्लास्टिक से दूरी, पानी और बिजली की बचत, पर्यावरण-अनुकूल उत्पादों का उपयोग। इस यात्रा ने मुझे सिखाया कि यात्रा का उद्देश्य केवल नई जगहें देखना नहीं, बल्कि अपने भीतर एक नई दृष्टि का जन्म देना भी है।

आज भी जब मैं आँखें बंद करती हूँ, तो फ़िरोज़ी समुद्र, रंग-बिरंगी मछलियाँ, लहरों के साथ झूमती समुद्री घास, शांत समुद्री कछुआ और उस बुज़ुर्ग मछुआरे की मुस्कान एक साथ याद आ जाते हैं। तब मन में केवल एक ही विचार आता है—यदि हम प्रकृति की रक्षा करेंगे, तभी प्रकृति अपनी अनूठी सुंदरता आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित पहुँचा सकेगी।

सुश्री अन्नपूर्णा बनर्जी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कहानी/व्यंग्य ❖

परमात्मा का कार्यालय



एक बार की बात है। मैंने सुना कि परमात्मा के कार्यालय के कर्मचारियों एवं अधिकारियों के बीच सूरज के व्यवहार को लेकर काफी परेशानी हो रही थी। अंधेरा तो सूरज से इतना ज्यादा परेशान हो गया कि वह सीधा यमराज (मृत्यु के देवता) के पास पहुँचा और फूट-फूट कर रोने लगा। उसने शिकायत की, "प्रभु! मैं अब और सहन नहीं कर सकता। यह सूरज मेरा सबसे बड़ा दुश्मन है। जैसे ही सुबह होती है, यह मेरा पीछा करने लगता है। मैं जहाँ भी छुपता हूँ, यह वहीं पहुँच जाता है। मुझे चैन की साँस नहीं लेने देता। आखिर मेरा कसूर क्या है?"

यमराज ने अंधेरे की व्यथा ध्यानपूर्वक सुनी। उन्होंने उसे आश्वस्त करते हुए कहा—"तुम्हारा विषय अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसका अंतिम निर्णय मेरे अधिकार क्षेत्र में नहीं आता। अतः नियमानुसार तुम्हारी बात उच्चतर प्राधिकारी (Higher Authority) अर्थात् परमात्मा तक समुचित माध्यम से (Through Proper Channel) पहुँचना आवश्यक है। तुम परमात्मा को संबोधित करते हुए एक सुविचारित प्रारूप-पत्र (Draft Letter) तैयार करो तथा अपनी समस्त पीड़ा, तथ्यों एवं तर्कों का विस्तृत टिप्पणी-पत्र (Detailed Note) संलग्न कर एक विधिवत् फाइल प्रस्तुत (Put Up) करो।"

यमराज के निर्देशानुसार फाइल तैयार की गई। आवश्यक टिप्पणियाँ अंकित की गईं, संबंधित अभिलेख संलग्न किए गए तथा सभी औपचारिकताओं की पूर्ति के उपरांत वह फाइल परमात्मा के श्रीचरणों में विचारार्थ एवं आदेशार्थ प्रस्तुत कर दी गई।

परमात्मा ने सूरज को बुलवाया। सूरज हाजिर हुआ, तो परमात्मा ने उससे पूछा, "तुम इस बेचारे अंधेरे को इतना परेशान क्यों करते हो? वह जहाँ भी जाता है, तुम पीछे-पीछे पहुँच जाते हो। उसे भी जीने का हक है, तुम उसके पीछे क्यों पड़े हो?" सूरज यह सुनकर बहुत हैरान हुआ। उसने बड़ी विनम्रता से कहा, "अंधेरा? कौन अंधेरा? प्रभु, क्षमा करें, लेकिन मैं आज तक किसी 'अंधेरे' नाम की चीज़ से मिला ही नहीं हूँ। मुझे तो पता भी नहीं कि वह कैसा दिखता है। मैंने उसे कभी देखा ही नहीं, तो परेशान करने का सवाल ही नहीं उठता। आप बस एक बार अंधेरे को मेरे सामने ला खड़ा कीजिए। अगर वह मुझे मिल जाए, तो मैं उससे माफी माँग लूँगा अगर मुझसे कोई भूल हुई होगी।"

हजारों-लाखों साल बीत गए, लेकिन परमात्मा आज तक अंधेरे और सूरज की मुलाकात नहीं करवा पाए। वह मामला (File) आज भी परमात्मा के पास लंबित (pending) है। जैसे ही अंधेरे को बुलाया जाता,

वह सूरज के आते ही गायब हो जाता। वह सूरज के सामने आ ही नहीं सकता था। सुना तो था कि परमात्मा सर्वशक्तिमान है, लेकिन इस काम में वह भी असहाय है। वास्तव में अंधेरे की अपनी कोई सत्ता है ही नहीं, अंधेरा कोई 'चीज' नहीं है, वह केवल 'प्रकाश का अभाव' (Absence of light) है। जो चीज है ही नहीं, वह प्रकाश का सामना कैसे कर सकती है?

मनुष्य के भीतर दो तरह के भाव होते हैं—एक होता है प्रेम जिसे प्रकाश (सूरज) के रूप में तथा दूसरा होता है नफरत या घृणा जिसे अंधेरे के रूप में इस कहानी/व्यंग्य में जिक्र किया गया है। कहानी का सार यह है कि नफरत को समाप्त करने का प्रयास करना बेकार है। इसके विपरीत प्रेम का भाव हृदय में भरना चाहिए। जिस मात्रा में प्रेम बढ़ेगा उसी मात्रा में घृणा कम होगी—ठीक उसी प्रकार जैसे कमरे में जिस मात्रा में प्रकाश घटता जाता है उसी मात्रा में अंधेरा बढ़ता है, और जिस मात्रा में प्रकाश बढ़ता है, अंधेरा उसी मात्रा में घटने लगता है। यदि कमरे को पूरी तरह प्रकाश से भर दिया जाए तो अंधेरा बिल्कुल नहीं रहेगा। इसी प्रकार यदि मनुष्य प्रेम से भर जाए तो उसके भीतर नफरत अपने आप गायब हो जाएगा।

इस सत्य को समझने के लिए सूफ़ी संत राबिया और हसन का एक प्रसिद्ध प्रसंग अत्यंत प्रेरणादायक है। एक दिन हसन, राबिया के घर गए। उन्होंने देखा कि राबिया ने पवित्र ग्रंथ कुरान में 'शैतान से नफरत करो' वाला शब्द काट दिया था। हसन चौंक उठे और बोले, "राबिया यह तुमने क्या किया? यह तो कुफ़्र (ईशनिंदा) है!" राबिया ने शांत भाव से उत्तर दिया—"मैं उस शैतान से नफरत कैसे करूँ, जिसे मेरे खुदा ने बनाया है? अगर मेरे भीतर प्रेम है, तो नफरत के लिए स्थान कहाँ है?"

यह उत्तर केवल एक तर्क नहीं, बल्कि एक अनुभूति है। यहाँ दो स्तर सामने आते हैं—नियम का धर्म और प्रेम का धर्म। नियम का धर्म हमें बताता है कि क्या सही है, क्या गलत, किससे प्रेम करना है, किससे नफरत। यह बाहरी अनुशासन देता है। लेकिन प्रेम का धर्म—जो राबिया जीती हैं—हमें भीतर से रूपांतरित करता है। वहाँ न द्वेष है, न विभाजन, वहाँ केवल स्वीकार है।

एक और घटना जीसस के जीवन से जुड़ी हुई है। जब जीसस को सूली दी जा रही थी तो उन्होंने परमात्मा से प्रार्थना की—"हे प्रभु, इन्हें माफ कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं।" सोचिए, किसी को सूली दी जा रही है और उसके भीतर इतना प्रेम है कि सूली देने वाले के प्रति भी क्षमा की भावना उठ रही है। यह तभी संभव है जब किसी का हृदय पूर्ण रूपेण प्रेम से भरा हो।

"सच्चा धर्म नियमों में नहीं, बल्कि प्रेम में प्रकट होता है।" जब प्रेम जागता है, तो 'मैं' और 'तू', 'अच्छा' और 'बुरा' ये सब भेद मिट जाते हैं। प्रेम एक ऐसा प्रकाश है, जिसमें विरोध अपने आप समाप्त हो जाता है। आज के समय में, जब समाज विभाजनों, मतभेदों और विरोधों से भरा हुआ है, राबिया और जीसस की यह

उद्घोषणा अत्यंत प्रासंगिक है। ऐसे में यह कथा हमें याद दिलाती है कि वास्तविक धर्म वह है, जो हमें जोड़ता है—तोड़ता नहीं।

हमारे जीवन की बहुत सी समस्याएँ (जैसे डर, क्रोध, ईर्ष्या) भी ऐसी ही 'पेंडिंग फाइलें' हैं। हम उन्हें हल करने की कोशिश करते हैं, उनसे लड़ते हैं, उनकी शिकायत परमात्मा से करते हैं। लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि वे समस्याएँ केवल 'प्रेम या होश की कमी' के कारण हैं। समाधान यह है कि अपने भीतर प्रेम को बढ़ाएं। जैसे ही आपके भीतर प्रेम का सूरज उगेगा, आपके विकार (अंधेरा) बिना लड़े ही विदा हो जाएंगे, क्योंकि प्रकाश की उपस्थिति में अंधेरा टिक ही नहीं सकता।

श्री मेघन पासवान

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

मेरा भ्रम टूट गया



मेरा भ्रम टूट गया कि "मैं" करता हूँ,
करता तो वो ही है।
मैं साँस लेता हूँ- यह भी भ्रम था मेरा,
साँस तो वो ही लेता है।
कभी कक्षा में प्रथम आया,
तो मन ने कहा- "मैं जीत गया।"
लोगों ने जब प्रशंसा की,
अहंकार भीतर खिल उठा।
मैं भूल गया उस सत्य को,
जो हर श्वास में मेरे साथ था;
मेरे भीतर जो परमात्मा था,
वही मेरा हर नाथ था।
मैंने सोचा- मैंने पाया,
मैंने रचा, मैंने कमाया।
पर जब भीतर झाँक के देखा,
हर उपलब्धि उसी की माया।
जब यह सत्य हृदय में उतरा,
अहंकार का पर्वत पिघल गया।
'मैं' का दीप स्वयं बुझा,
वो का सूरज निकल गया।
अब न कोई मेरा गौरव,
न कोई मेरी हार रही।
जो कुछ पाया, जो कुछ खोया,
सब उसी की दरकार रही।
अब हर कर्म उसे अर्पित है,
हर श्वास उसी का नाम।
मैं तो केवल एक निमित्त हूँ,
अब कबीर की वाणी लगती जीवन का अमृत-सार है-
"मेरा मुझमें कुछ नहीं,
जो कुछ है सो तेरा।
तेरा तुझको सौंपते,
क्या लागे है मेरा।"
अब न "मैं" का कोई दावा,
न यश की कोई आस।
जिसने मुझमें प्राण बसाए,
उसी को अर्पित हर श्वास।
मैं मिट जाऊँ, तू ही रहना,
यही हृदय की पुकार।
मुझमें बस तू, तुझमें मैं क्या?
तू ही जीवन का आधार।
मेरा भ्रम अब पूर्णतः टूटा—
"मैं" कुछ भी नहीं, वो ही सब है।
जो भी हूँ, जितना भी हूँ,
सब उसी की अनंत कृपा है।

श्री मेघन पासवान
वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ कहानी ❖

झूठी खुशी का भ्रम



रात लगभग बारह बजे की होगी। चारों ओर अरावली की पहाड़ियाँ अंधेरे में खो चुकी थीं। सड़क पर दूर-दूर तक कोई वाहन नहीं था। कार का इंजन जवाब दे चुका था और मोबाइल फ़ोन पर "No Network" लिखा हुआ था। अक्षित ने झुँझलाकर एक पत्थर सड़क पर दे मारा। "क्या बदकिस्मती है! इतने महँगे ट्रिप का यही हाल होना था।"

उसके दोनों दोस्त कार में ही सो गए थे। लेकिन अक्षित की आँखों में नींद नहीं थी। शहर का लड़का था। हर समय मोबाइल, संगीत, सोशल मीडिया और लोगों के बीच रहने वाला। यह सन्नाटा उसे डराने लगा। वह सड़क से थोड़ा दूर चल पड़ा। कुछ दूर उसे एक टिमटिमाती हुई रोशनी दिखाई दी। जिज्ञासा उसे उस ओर ले गई। वहाँ एक छोटा-सा अलाव जल रहा था। पास ही भेड़ों का झुंड बैठा था और एक वृद्ध चरवाहा लकड़ी के सहारे बैठा आकाश की ओर देख रहा था।

अक्षित ने पूछा, "बाबा... यहाँ अकेले रहते हो?" बूढ़ा मुस्कुराया। "अकेला?" उसने आकाश की ओर इशारा किया। "इतने तारे हैं, ये भेड़ें हैं, हवा है, यह आग है... फिर अकेला कहाँ हूँ?" कुछ देर दोनों चुप रहे। फिर बूढ़े ने पूछा कि अक्षित क्या करता है। "कॉरपोरेट जॉब... अच्छी सैलरी है... घूमना-फिरना पसंद है... जिंदगी बढ़िया चल रही है।" बूढ़ा मुस्कुराया, "तूने जवाब देने में एक पल भी नहीं लगाया। अगर जिंदगी इतनी अच्छी है, तो इस सुनसान रात में एक अनजान बूढ़े के पास बैठा क्या ढूँढ रहा है?"

बूढ़े ने कहा, "सुविधा और सुख में उतना ही फर्क है जितना दवा और स्वास्थ्य में। दवा खरीद सकते हो। स्वास्थ्य नहीं।" उसने अक्षित से पूछा कि उसने अपनी उम्र में सबसे ज्यादा क्या कमाया और क्या खोया। अक्षित बोला, "पैसा कमाया... और शायद कुछ नहीं खोया।" बूढ़ा मुस्कुराया, "जब इंसान कहता है कि उसने कुछ नहीं खोया... तभी समझ लेना चाहिए कि उसने बहुत कुछ खो दिया है।"

बूढ़े ने भेड़ों की ओर इशारा करते हुए कहा कि वे हर शाम वापस लौट आती हैं, क्योंकि उन्हें अपना घर याद है। "आज आदमी को रास्ते बहुत याद हैं... लेकिन घर भूल गया है। जहाँ तुम्हारा मन शांत हो जाए... वही घर है।" फिर उसने मिट्टी के कटोरे में पानी और मुट्ठी भर नमक डालकर अक्षित को पिलाया — बहुत खारा लगा। फिर उतना ही नमक तालाब में डालकर पिलाया — अब बिल्कुल सामान्य लगा। बूढ़ा बोला, "दुःख नमक की तरह है। फर्क केवल पात्र का होता है। जिसका मन छोटा है, उसे हर दुःख असहनीय लगता है।"

अक्षित ने पूछा, "बाबा, हम मेहनत क्यों करें अगर सुख ही न मिले?" बूढ़े ने कहा, "किसने कहा मेहनत मत करो? मैं केवल इतना कह रहा हूँ कि साधन को साध्य मत बना दो। बुद्ध ने कहा था — तृष्णा ही दुःख का मूल कारण है। और गीता कहती है — कर्म करो, फल की चिंता मत करो।" बूढ़े ने आगे कहा, "चाँद कभी अपनी तस्वीर नहीं खींचता। फूल कभी अपनी खुशबू का प्रचार नहीं करते। जो वास्तव में सुंदर होता है, उसे घोषणा करने की आवश्यकता नहीं होती।"

उसने पूछा कि बचपन में अक्षित को सबसे ज्यादा खुशी कब मिलती थी। "बारिश में भीगने में... पतंग उड़ाने में... दादी की कहानी सुनने में।" "उनमें से किसी चीज़ के लिए पैसे दिए थे?" "नहीं।" "फिर आज क्यों मान बैठे हो कि खुशी बिकती है?" बूढ़े ने कहा, "सूरज खुद जलता है, तभी दुनिया रोशन होती है। जो केवल अपने लिए जीता है, वह चमक सकता है। लेकिन जो दूसरों के लिए जीता है, वही प्रकाश बनता है।"

जाते-जाते बूढ़े ने बताया कि रोज़ रात खुद से पाँच प्रश्न पूछना चाहिए — क्या आज मैंने किसी का दिल दुखाया? क्या आज मैंने किसी की सहायता की? क्या आज मैंने अपने माता-पिता से प्रेम से बात की? क्या आज मैं कल से बेहतर इंसान बना? और यदि आज मेरी जिंदगी का आखिरी दिन होता तो क्या मैं इसी तरह जीना चाहता? "जिस दिन इन प्रश्नों के उत्तर ईमानदारी से देने लगोगे, उस दिन किसी गुरु की आवश्यकता नहीं रहेगी।"

पूर्व दिशा हल्की उजली होने लगी थी। अक्षित ने पीछे मुड़कर देखा — अलाव बुझ चुका था, भेड़ों का झुंड भी नहीं था, वहाँ केवल सुबह की सुनहरी रोशनी थी। उसे लगा जैसे वह पूरी रात किसी चरवाहे से नहीं, बल्कि अपने ही अंतर्मन से बात करता रहा हो। उस दिन के बाद उसने एक बात समझ ली — सुख वस्तुओं का गुण नहीं, मन की अवस्था है।

"मनुष्य का सबसे बड़ा भ्रम यह नहीं कि धन से सब कुछ खरीदा जा सकता है; बल्कि यह है कि जो सबसे मूल्यवान है, उसे धन से खरीदा जा सकता है। समय, प्रेम, विश्वास, अपनापन और शांति — ये कमाए नहीं जाते, इन्हें जिया जाता है।"

श्री रवि सैनी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ लेख ❖

संकल्प शक्ति



जीवन में अनेक चुनौतियाँ आती हैं। इनमें से कुछ चुनौतियाँ इतनी कठिन होती हैं कि वे हमारे शरीर के साथ-साथ हमारे मन को भी प्रभावित करती हैं। कैंसर, हृदय रोग, पक्षाघात, किडनी संबंधी रोग अथवा अन्य गंभीर बीमारियाँ व्यक्ति के जीवन को अचानक बदल देती हैं। ऐसे समय में दवाइयों और चिकित्सकीय उपचार के साथ-साथ जिस शक्ति की सबसे अधिक आवश्यकता होती है, वह है — दृढ़ संकल्प शक्ति (Will Power)।

संकल्प शक्ति वह आंतरिक ऊर्जा है, जो व्यक्ति को विपरीत परिस्थितियों में भी हार न मानने की प्रेरणा देती है। इतिहास और वर्तमान में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जहाँ लोगों ने अपनी अटूट इच्छाशक्ति, सकारात्मक सोच और निरंतर प्रयासों के बल पर गंभीर बीमारियों का सामना किया और एक नई जिंदगी प्राप्त की।

यह सत्य है कि केवल इच्छाशक्ति से हर बीमारी का उपचार संभव नहीं है। आधुनिक चिकित्सा, उचित दवाइयाँ, संतुलित आहार और विशेषज्ञों की सलाह का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। किंतु यह भी उतना ही सत्य है कि सकारात्मक मानसिकता रोग से लड़ने की क्षमता को बढ़ाती है। जब व्यक्ति स्वयं यह निश्चय कर लेता है कि उसे परिस्थितियों से हार नहीं माननी है, तब उसका मन और शरीर दोनों उपचार की प्रक्रिया में अधिक सक्रिय भूमिका निभाते हैं।

गंभीर बीमारी से जूझ रहे व्यक्ति के लिए प्रत्येक दिन एक नई परीक्षा होती है। ऐसे समय में परिवार का सहयोग, मित्रों का उत्साहवर्धन और स्वयं पर विश्वास उसे आगे बढ़ने की शक्ति प्रदान करते हैं। एक छोटी-सी मुस्कान, आशा के कुछ शब्द और सकारात्मक वातावरण रोगी के मनोबल को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संकल्प शक्ति का अर्थ केवल यह नहीं है कि हम बीमारी को नकार दें, बल्कि इसका अर्थ है — उसे स्वीकार करते हुए उससे लड़ने का साहस जुटाना। नियमित व्यायाम, ध्यान, योग, पर्याप्त विश्राम और मानसिक संतुलन बनाए रखना भी इच्छाशक्ति को मजबूत बनाते हैं।

हमें यह समझना चाहिए कि बीमारी व्यक्ति की पहचान नहीं होती। वह जीवन का एक कठिन अध्याय हो सकती है, लेकिन पूरी कहानी नहीं। अनेक लोगों ने गंभीर बीमारियों से उबरकर समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत बनने का कार्य किया है। उनकी सफलता का आधार केवल उपचार नहीं, बल्कि उनका अडिग विश्वास और दृढ़ निश्चय भी रहा है।

सुश्री श्रीलेखा एस मेनन
वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

मुस्कराना



मुस्कराना एक आदत नहीं, जीने का अंदाज़ है,
हर अँधेरी राह में यह उम्मीदों का आगाज़ है।
जब थक जाएँ कदम और मन हो थोड़ा उदास,
एक छोटी-सी मुस्कान भर देती है नया विश्वास।
मुस्कान से खिल उठते हैं रिश्तों के सारे फूल,
यह सिखाती है हमें — न बनो कभी प्रतिकूल।
दुख की धूप में भी जो मुस्कराना सीख लेता है,
वह जीवन के हर इम्तिहान को सहज ही जीत लेता है।
न धन चाहिए, न कोई अनमोल ख़ज़ाना,
सबसे सुंदर उपहार है — हर पल मुस्कराना।

सुश्री श्रीलेखा एस मेनन
वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

मेहनत कभी बेकार नहीं जाती



रात को दीया जलाकर जो लिखता है भाग्य अपना,

हार कर भी न रुके, वही है सच्चा सपना।

एक बूँद का निशान भले हो नगण्य सा,

पर समय के साथ बने वो प्रभाव अनन्य सा।

बार-बार गिरे जो बूँद पत्थर के ऊपर,

तोड़ देती है चट्टान भी, धीरज के भीतर।

काँटों भरी डगर पर जो चलता जाए निडर,

मंज़िल भी झुक के देखे, करती है उसका आदर।

हज़ार बार गिरे कोई, फिर भी उठ कर चले,

समय भी साथ देता जब इरादे हों अटल।

धूप हो या हो सर्दी, या बरसे घनघोर बादल,

थके हुए हाथ भी बुनते हैं सपनों का महल।

आज नहीं तो कल सही, फल ज़रूर मिलेगा,

मेहनत का हर बीज कभी न कभी खिलेगा।

इसलिए कहते हैं बुज़ुर्ग, है ये सच्ची कहानी,

मेहनत कभी बेकार नहीं जाती, यही रीत पुरानी।

श्री गजानन मोदी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

बरगद



गाँव के बीचों-बीच एक विशाल बरगद का पेड़ था। उसकी फैली हुई शाखाएँ मानो पूरे गाँव को अपनी गोद में समेटे रहती थीं। गाँव के लोग उसे प्यार से "बाबा बरगद" कहते थे। उसकी उम्र दो सौ साल से भी अधिक थी। वह न बोल सकता था, न चल सकता था, लेकिन उसकी खामोशी में अनगिनत कहानियाँ छिपी थीं।

समय धीरे-धीरे बदलने लगा। कच्ची गलियों की जगह पक्की सड़कें बन गईं। गाँव में बिजली आई, मोबाइल आए, इंटरनेट आया। लोगों की जिंदगी आसान होती गई, लेकिन उनके पास एक-दूसरे के लिए समय कम होता गया।

उसी गाँव में रामदीन नाम का एक किसान रहता था। उसका एक बेटा था — अमित। रामदीन ने अपनी सारी इच्छाएँ छोड़कर बेटे को पढ़ाया। अक्सर वह अमित को बरगद के नीचे बैठाकर कहता, "बेटा, पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बनना, लेकिन इतना बड़ा कभी मत बन जाना कि अपने गाँव और अपने लोगों को भूल जाओ।"

वर्षों की मेहनत रंग लाई। अमित की नौकरी शहर में लग गई। जाने से पहले उसने बरगद के तने को छुआ और मन ही मन कहा, "मैं जल्दी लौटूँगा।"

शहर में शुरुआत आसान नहीं थी, फिर भी अमित हर महीने पिता को पैसे भेजता, हर रविवार फ़ोन करता। धीरे-धीरे मेहनत रंग लाने लगी — प्रमोशन हुआ, फ्लैट खरीदा, शादी हुई, बच्चे हुए, ज़िम्मेदारियाँ बढ़ती चली गईं। वह सोचता, "बस इस साल काम थोड़ा संभल जाए... फिर गाँव जाकर बाबूजी के साथ कई दिन बिताऊँगा।" लेकिन वह "इस साल" कभी नहीं आया।

फ़ोन कॉल्स धीरे-धीरे कम होते गए। रामदीन हर शाम बरगद के नीचे बैठकर बेटे का इंतज़ार करता। एक दिन रामदीन बरगद से टिककर बैठा और धीरे से बोला, "तू तो सब देखता है बाबा... उससे कहना कि उसका बाप अभी भी इंतज़ार कर रहा है।"

एक सुबह अमित को खबर मिली कि रामदीन अब उनके बीच नहीं रहे। वह तुरंत गाँव पहुँचा, लेकिन अंतिम संस्कार हो चुका था। पिता के कमरे में उसे एक छोटी-सी डायरी मिली, जिसमें साधारण शब्दों में लिखा था — "आज अमित से बात हुई। बहुत व्यस्त था... आज उसका फ़ोन नहीं आया... आज बरगद के

नीचे बैठा था, सोचा शायद इस बार आ जाएगा... अब चलना थोड़ा मुश्किल हो गया है, फिर भी रोज़ बरगद तक चला जाता हूँ। क्या पता किसी दिन बस से उतरता हुआ मेरा बेटा दिख जाए।"

अमित फूट-फूटकर रो पड़ा। गाँव के एक बुज़ुर्ग ने उसे बताया, "तुम्हारे बाबूजी यहाँ रोज़ बैठते थे। किसी से शिकायत नहीं करते थे। बस कहते थे — मेरा अमित अच्छा लड़का है। काम में फँसा होगा। एक दिन ज़रूर आएगा।" अमित बरगद के तने से लिपट गया।

उसने पहली बार समझा कि उसने अपने पिता को पैसों की कमी कभी नहीं होने दी, लेकिन समय की सबसे बड़ी कमी छोड़ दी। कुछ रिश्ते ऐसे होते हैं जिन्हें धन नहीं, केवल उपस्थिति चाहिए होती है। उसी क्षण उसने निश्चय किया कि वह अपने पिता के दिए संस्कारों को फिर से जीवित करेगा — उसी निर्णय से गाँव में पुस्तकालय, बच्चों के लिए अध्ययन केंद्र और बरगद के संरक्षण का अभियान शुरू हुआ, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ यह कभी न भूलें कि जीवन की सबसे मजबूत जड़ें रिश्तों में होती हैं।

श्री अनमोल शर्मा

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

सिर्फ काम नहीं, जीवन भी ज़रूरी है



सुबह के सात बजे थे। एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में प्रोजेक्ट मैनेजर के रूप में काम करने वाला आरव अपने काम के प्रति बेहद ईमानदार और समर्पित था। कार्यालय में हर कोई उसकी मेहनत की तारीफ़ करता था, लेकिन उस मुस्कान के पीछे एक थकान छिपी रहती थी। घर लौटते-लौटते रात के दस बज जाते। आठ साल की बेटी अन्वी अक्सर सो चुकी होती।

एक दिन अन्वी ने स्कूल प्रोजेक्ट के लिए एक चित्र बनाया — घर, मम्मी, वह खुद, लेकिन पापा नहीं थे। पूछने पर अन्वी ने मासूमियत से कहा, "पापा तो हमेशा ऑफिस में रहते हैं, इसलिए मैंने उन्हें वहीं बना दिया।" आरव सिर्फ इतना कह पाया — "बस यह प्रोजेक्ट खत्म हो जाए, फिर सब ठीक हो जाएगा।" लेकिन "बस यह प्रोजेक्ट" कभी खत्म नहीं हुआ।

कुछ महीनों बाद कंपनी ने आरव को "बेस्ट परफॉर्मर ऑफ द ईयर" का पुरस्कार दिया। लेकिन उसी समय नेहा का संदेश आया — "आज अन्वी का वार्षिक सांस्कृतिक कार्यक्रम था। वह पूरे समय आपको ढूँढती रही।" उस रात घर लौटकर देखा कि अन्वी के तकिए के पास एक पर्ची रखी थी — "पापा, अगली बार आप ज़रूर आना।"

कुछ दिनों बाद एक नेतृत्व कार्यशाला में कंपनी के पूर्व निदेशक शेखर जी ने कहा, "मैंने अपने जीवन के तीस साल सिर्फ काम को दिए... लेकिन जब रिटायर हुआ तो एहसास हुआ कि मेरे बच्चों का बचपन मेरे इंतज़ार में ही बीत गया। सफलता केवल पद और वेतन से नहीं मापी जाती।" यह बात सीधे आरव के दिल में उतर गई।

अगले दिन आरव ने अपने जीवन को नए ढंग से देखने का निर्णय लिया — काम की प्राथमिकता तय की, टीम को जिम्मेदारी सौंपी, ऑफिस समय के बाद ई-मेल देखना छोड़ दिया। शुरुआत में लगा कि काम प्रभावित होगा, लेकिन हुआ उल्टा — टीम अधिक जिम्मेदार बनी, काम समय पर पूरा होने लगा। अब आरव रोज़ शाम समय पर घर पहुँचता, अन्वी के साथ पार्क जाता।

कुछ महीनों बाद स्कूल के कार्यक्रम में आरव सबसे पहले पहुँचा। अन्वी की नज़र जैसे ही पापा पर पड़ी, उसके चेहरे पर ऐसी मुस्कान आई जिसे कोई पुरस्कार नहीं खरीद सकता था। कार्यक्रम के बाद उसने दौड़कर आरव को गले लगाया और बोली — "पापा, आज आप आए... यही मेरी सबसे बड़ी जीत है।"

आरव ने अपने विभाग में "कार्य-जीवन संतुलन" पर एक नई पहल शुरू की — समय पर कार्यालय से निकलने की संस्कृति, अनावश्यक बैठकों में कमी, छुट्टियों का सम्मान, मानसिक स्वास्थ्य पर चर्चा। धीरे-धीरे पूरे विभाग का वातावरण बदल गया, तनाव कम हुआ, उत्पादकता बढ़ी।

एक स्वागत समारोह में जब उससे सफलता का रहस्य पूछा गया, आरव मुस्कुराकर बोला, "पहले मैं सोचता था कि जितना अधिक समय ऑफिस को दूँगा, उतना अधिक सफल बनूँगा। लेकिन आज समझ आया है कि सफलता समय की मात्रा से नहीं, जीवन के संतुलन से मिलती है। काम जीवन को बेहतर बनाने का माध्यम है, स्वयं जीवन नहीं।"

श्री अविनाश कुमार

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

रंगों से बढ़कर रिश्तों का उत्सव



शहर के बीचों-बीच स्थित "सहयोग अपार्टमेंट" में देश के अलग-अलग राज्यों से आए परिवार रहते थे — कोई राजस्थान से, कोई बंगाल से, कोई पंजाब, केरल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र या उत्तर प्रदेश से। समय के साथ लोगों की व्यस्तता इतनी बढ़ गई थी कि पड़ोस में कौन रहता है, यह भी कई लोग ठीक से नहीं जानते थे।

एक दिन नई सचिव सुजाता जी ने सोसाइटी की बैठक बुलाई और कहा, "हम एक ही परिसर में रहते हैं, लेकिन एक-दूसरे को जानते तक नहीं। क्यों न इस बार आने वाले त्योहारों को हम सब मिलकर मनाएँ?" उनकी बात सभी के मन को छू गई।

होली आई — सोसाइटी के पार्क में सभी परिवार एक साथ मिले। पंजाब से आए हरप्रीत सिंह ढोल लेकर आए, बंगाल की माधुरी दीदी मिठाइयाँ लाईं। दक्षिण भारत के श्रीनिवासन जी पहली बार रंगों की होली खेलने में झिझक रहे थे, लेकिन छोटे आरव के आग्रह पर वे भी सबके साथ हँसते-खेलते नज़र आए।

रमज़ान में अहमद साहब ने ईद पर सभी पड़ोसियों को अपने घर बुलाया। सेवइयाँ-शीर खुरमा का स्वाद पहली बार चखा गया। अहमद साहब ने कहा, "ईद की सबसे बड़ी खुशी अपनों के साथ बाँटने में है।"

ओणम पर श्रीनिवासन जी ने केले के पत्तों पर पारंपरिक भोज परोसा और ओणम की कथा सुनाई — समृद्धि, समानता और खुशहाली का त्योहार। दीपावली पर बच्चों ने सुझाव दिया कि पटाखों पर कम खर्च करके पास के अनाथालय में मिठाइयाँ-किताबें बाँटी जाएँ। क्रिसमस पर हरप्रीत सिंह सांता बने और हर बच्चे से वादा लिया कि वह एक नया पौधा लगाएगा।

जब वृद्धा शारदा देवी अचानक बीमार हुईं, तो पूरा अपार्टमेंट एक परिवार की तरह उनके साथ खड़ा हो गया। उनकी आँखों में आँसू आ गए — "मैं सोचती थी कि मैं यहाँ अकेली हूँ, लेकिन आज समझ आया कि मेरा परिवार बहुत बड़ा है।"

31 दिसंबर की रात सभी ने संकल्प लिया — "हम हर त्योहार केवल अपने घर में नहीं, बल्कि पूरे समाज के साथ मिलकर मनाएँगे।" कुछ वर्षों बाद "सहयोग अपार्टमेंट" की यही पहचान पूरे शहर में बन गई — वहाँ हर त्योहार "हमारा" त्योहार बन चुका था।

त्योहार केवल पूजा-पाठ, मिठाइयों या छुट्टियों का नाम नहीं हैं। वे हमें मिलना, बाँटना, क्षमा करना और एक-दूसरे की खुशियों में शामिल होना सिखाते हैं। "त्योहार केवल घरों को नहीं सजाते, वे दिलों को भी रोशन करते हैं।"

श्री बिजय शंकर

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

ऑफिस की चाय — हर समस्या का अनौपचारिक समाधान



जिला मुख्यालय के एक सरकारी कार्यालय के बाहर बरामदे के कोने में एक छोटी-सी चाय की दुकान थी, जिसे सभी प्यार से "चाय चौपाल" कहते थे। दुकान के मालिक रघु काका पिछले पच्चीस वर्षों से वहीं चाय बना रहे थे। वे मज़ाक में कहते, "साहब, इस दफ्तर में दो चीज़ें कभी बंद नहीं होतीं — फाइलों का सफर और मेरी चाय की केतली।"

एक दिन नई ऑनलाइन व्यवस्था लागू हुई और सर्वर बार-बार बंद हो रहा था। रघु काका ट्रे लेकर आ गए — "लीजिए साहब, पहले चाय पीजिए। खाली पेट कोई समस्या हल नहीं होती।" चाय की चुस्कियों के बीच आईटी सहायक ने सुझाव दिया कि नेटवर्क दूसरे रूट से जोड़ा जाए, और पाँच मिनट बाद सिस्टम चल पड़ा।

एक महत्वपूर्ण फाइल तीन दिनों से टेबल-दर-टेबल घूम रही थी। अनुभाग अधिकारी वर्मा साहब ने सबको चाय लेकर अपने कमरे में बुलाया। चाय के साथ बातचीत में ही पता चला कि नक्शे की प्रति रिकॉर्ड शाखा में रखी है — दस मिनट में दस्तावेज़ भी आ गया, फाइल भी आगे बढ़ गई।

रघु काका गर्व से कहते, "साहब, मेरी दुकान पर कोई छोटा-बड़ा नहीं होता। यहाँ बाबू भी उसी बेंच पर बैठता है, जहाँ अधिकारी बैठते हैं।" चाय की मेज़ पर पदनाम पीछे रह जाते थे और इंसान आगे आ जाता था।

नई उपजिलाधिकारी नेहा सिंह, जो समय की बहुत पाबंद थीं, पहले चाय के लंबे ब्रेक से असहज थीं। लेकिन एक दिन खुद रघु काका की दुकान पर पहुँचीं और वहीं चाय पीते-पीते एक ग्रामीण जल-समस्या का समाधान निकल आया। लौटते हुए उन्होंने मुस्कुराकर कहा, "लगता है इस कार्यालय की अनौपचारिक मीटिंग रूम तो रघु काका की दुकान ही है।"

रघु काका का एक अनोखा नियम था — यदि कोई कर्मचारी गुस्से में आता, तो वे बिना कुछ पूछे चाय सामने रख देते और कहते, "पहले दो घूँट चाय... फिर दो शब्द बात।" अक्सर चाय खत्म होते-होते गुस्सा भी खत्म हो जाता।

अंत में जब रघु काका ने सेवानिवृत्ति की घोषणा की, तो विदाई समारोह में अधिकारी ने कहा, "रघु काका ने सिर्फ़ चाय नहीं बनाई, उन्होंने लोगों के बीच संवाद बनाए।" रघु काका ने केवल इतना कहा, "साहब, चाय का स्वाद चीनी से नहीं, साथ बैठने से बढ़ता है।"

कार्यालय की चाय केवल एक पेय नहीं, बल्कि संवाद, सहयोग और अपनत्व का स्वाद है। जहाँ नियमों के साथ रिश्तों का सम्मान हो, जहाँ काम के साथ मुस्कान भी हो, वहीं कार्यालय सच मायनों में एक परिवार बन जाता है।

श्री मनीष यादव

सहायक पर्यवेक्षक

❖ ❖ ❖

❖ लेख ❖

डिजिटल भुगतान करते समय किन बातों का ध्यान रखें



आज का युग डिजिटल तकनीक का युग है। यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (UPI), इंटरनेट बैंकिंग, मोबाइल वॉलेट, डेबिट कार्ड और क्रेडिट कार्ड जैसी डिजिटल भुगतान सुविधाओं ने हमारे दैनिक जीवन को सरल और तेज़ बना दिया है। लेकिन जहाँ सुविधा होती है, वहाँ सावधानी भी उतनी ही आवश्यक होती है। अधिकांश धोखाधड़ी तकनीक की वजह से नहीं, बल्कि जानकारी के अभाव या छोटी-सी लापरवाही के कारण होती है।

डिजिटल भुगतान के प्रमुख लाभ हैं — समय की बचत, चौबीसों घंटे सुविधा, हर लेन-देन का पारदर्शी रिकॉर्ड, नकदी रखने की कम आवश्यकता, और बिजली बिल, कर भुगतान, रेल टिकट जैसी सरकारी सेवाओं में सरलता।

कुछ आवश्यक सावधानियाँ: अपना UPI PIN या OTP कभी साझा न करें — कोई भी बैंक या संस्था फोन/संदेश से यह नहीं माँगती। QR कोड स्कैन करने से पहले सावधान रहें — पैसे प्राप्त करने के लिए कभी QR कोड स्कैन या PIN दर्ज करने की ज़रूरत नहीं होती। केवल आधिकारिक ऐप स्टोर से ही ऐप डाउनलोड करें। मोबाइल पर मजबूत पासवर्ड, फिंगरप्रिंट या फेस लॉक रखें। सार्वजनिक Wi-Fi पर भुगतान करने से बचें। भुगतान के बाद प्राप्तकर्ता का नाम व राशि दोबारा जाँचें। किसी अनजान लिंक ("KYC अपडेट करें", "इनाम जीतें" आदि) पर क्लिक न करें। मोबाइल और बैंकिंग ऐप को नियमित अपडेट रखें।

सामान्य धोखाधड़ी के तरीके — फर्जी कॉल कर बैंक अधिकारी बनना, फर्जी QR कोड, नकली वेबसाइट, इनाम/लॉटरी का लालच, और रिमोट एक्सेस ऐप इंस्टॉल करवाना। यदि धोखाधड़ी हो जाए तो तुरंत बैंक की ग्राहक सेवा से संपर्क करें, खाता/कार्ड अस्थायी रूप से ब्लॉक करवाएँ, संदेश व स्क्रीनशॉट सुरक्षित रखें और आवश्यकता पर साइबर हेल्पलाइन में शिकायत दर्ज करें — जितनी जल्दी सूचना दी जाएगी, धन की सुरक्षा की संभावना उतनी अधिक होगी।

सरकारी कर्मचारियों की जिम्मेदारी केवल स्वयं सुरक्षित भुगतान करना ही नहीं, बल्कि नागरिकों को भी सही जानकारी देना है। डिजिटल साक्षरता आज के समय की एक आवश्यक सामाजिक जिम्मेदारी भी है। "डिजिटल भुगतान अपनाइए, लेकिन जागरूकता को अपनी सबसे मजबूत सुरक्षा बनाइए।"

श्री संजीव कुमार

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

नींद की कीमत



रात के ग्यारह बज चुके थे, लेकिन अभिषेक के कमरे की बत्ती अभी भी जल रही थी। एक प्रतिष्ठित कंपनी में वरिष्ठ अधिकारी अभिषेक का मानना था — "जो कम सोता है, वही ज़्यादा आगे बढ़ता है।" धीरे-धीरे वह रोज़ केवल चार-पाँच घंटे ही सोता था। समय के साथ उसका शरीर और मन दोनों थकने लगे — सिर भारी रहता, चिड़चिड़ापन बढ़ने लगा, बैठकों में ध्यान भटकने लगा।

सहकर्मी रिया ने पूछा, "सर, सब ठीक है? आजकल आप बहुत थके हुए लगते हैं।" अभिषेक ने बात हल्के में टाल दी। कुछ दिनों बाद कंपनी की सबसे महत्वपूर्ण प्रस्तुति के दौरान वह महत्वपूर्ण आँकड़े भूल गया, स्लाइडें गलत क्रम में थीं। ग्राहक नाराज़ हुए, कंपनी को बड़ा प्रोजेक्ट नहीं मिला।

डॉक्टर से मिलने पर पता चला — "समस्या किसी बीमारी की नहीं, आपकी नींद की है।" डॉक्टर ने समझाया, "आप अपने मोबाइल की बैटरी रोज़ चार्ज करते हैं, लेकिन अपने शरीर और दिमाग को चार्ज करना भूल गए हैं।"

उस शाम अभिषेक अपने गाँव गया, जहाँ दादाजी ने कहा, "बेटा, खेत में काम करने वाला किसान अगर बैलों को आराम न दे, तो वे अगले दिन ठीक से हल नहीं चला पाएँगे। शरीर को आराम देना कमजोरी नहीं, समझदारी है।"

अभिषेक ने अपनी दिनचर्या बदल दी — रात दस बजे के बाद मोबाइल-लैपटॉप बंद, सोने से पहले किताब पढ़ना, नियमित समय पर सोना-उठना, सुबह सैर और योग। एक महीने बाद सब बदल चुका था — वह बिना अलार्म उठता, ध्यान केंद्रित रहता, निर्णय लेने की क्षमता बेहतर हो गई।

कुछ महीनों बाद फिर एक बड़ी प्रस्तुति मिली। इस बार अभिषेक ने प्रस्तुति के साथ-साथ अपनी नींद का भी पूरा ध्यान रखा। बैठक में वह पूरी ऊर्जा और आत्मविश्वास से गया, ग्राहक प्रभावित हुए, कंपनी को प्रोजेक्ट मिल गया। निदेशक के पूछने पर अभिषेक बोला, "पहले मैं सफलता के लिए अपनी नींद कम करता था। अब समझ गया हूँ कि सफलता के लिए अच्छी नींद ज़रूरी है।"

अभिषेक ने अपने कार्यालय में "स्वस्थ जीवन, सफल जीवन" अभियान शुरू किया, जिससे धीरे-धीरे पूरे कार्यालय का वातावरण बदल गया — कर्मचारी अधिक स्वस्थ, प्रसन्न और उत्पादक बनने लगे। "नींद में बिताए गए घंटे समय की बर्बादी नहीं, बल्कि अगले दिन की सफलता में किया गया सबसे अच्छा निवेश हैं।"

श्री शिवओम शर्मा

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

विरह



लौ अभी तो जली ही है, इसे कैसे बुझने दूँ
तुम अभी तो मिले ही हो, तुम्हें कैसे बिछड़ने दूँ
अब जब प्रेम रस में, भीग रहा है अंतर्मन
इस उल्लास को ग़म में कैसे घुल जाने दूँ।
तू ही बता मैं तुझको कैसे जाने दूँ।।।
सबको खुश रखने की कोशिश में,
अंदर से हरदम जलता रहा हूं मैं,
फिर भी रिश्तों को बचाने में,
हमेशा कुछ कम पड़ता रहा हूं मैं।
तुम संशय से सहजता तक लाए हो
स्वयं को इस माया मैं, फिर कैसे उलझने दूँ,
सहरा मैं पुष्प खिलाने वाले माली को,
नूतन गुलशन से कैसे बिछड़ने दूँ।
तू ही बता मैं तुझको कैसे जाने दूँ।।।
मन में खिन्नता का वास होगा,
नीचे गिर रहा आकाश होगा,
वनों में सूखता हर पात होगा,
लहू जल कर के मेरा ख़ाक होगा,
साँसो के लिए संघर्ष होगा
स्वप्नों का मेरे विध्वंस होगा
जगत में बह रहा अवसाद होगा
क़िस्मत पर कड़ा आघात होगा
न जाने, तुझ बिन, मेरा क्या होगा।
तेरे बग़ैर, मेरा जो होगा सो होगा, किसी ग़ैर के भरोसे, तू बता, मैं तुझको कैसे जाने दूँ।।
मेरा अंतिम दृश्य हो तुम
मुझमें कहीं अदृश्य हो तुम
चैतन्य का निर्माण हो तुम
मुझमें समाहित प्राण हो तुम
तुम्हें जाना तो मैंने खुद को जाना
मुझे भी तर के हैं उस पार जाना
बिखर जाऊँगा तुझसे दूर होकर
न तज मुझको यूँ तू मजबूर होकर
पकड़ कर आज मेरा हाथ चल तू
सफ़र छोटा ही है ग़र साथ चल तू
अडिग रहना सिखाया है तुम्हीं ने,
धीर धरना सिखाया है तुम्हीं ने
कुटिलता चाहे मुझको जितना छल ले
उपस्थित रोशनी, नैराश्य चाहे, तो निगल ले
भराभर पंक में हंसता हुआ शतदल मिलेगा
पावस को प्रणय में लिप्त इक चातक मिलेगा
ये यक़ीन रखना सिखाया है तुम्हीं ने
जीवन मोती चुनना भी सिखाया है तुम्हीं ने
अतः वादा निभाकर "नित्य" रहना,
अब फिर से जाने की ना कहना।।।

श्री अनमोल शर्मा
लेखा परीक्षक

❖ कविता ❖

मैं रोज़ थोड़ा-सा उजाला बोता हूँ



हर सुबह, जब सूरज अपनी पहली किरण
खिड़की पर रख जाता है
मैं अपने मन की मिट्टी में
एक नया विश्वास बोता हूँ।
भीड़ के शोर में भी कुछ ख़ामोशियाँ मुस्कुराती हैं,
वे कहती हैं
"हर जीत ताली नहीं होती,
कुछ जीतें चरित्र में खिलती हैं।"
मैंने देखा है, सबसे ऊँचे पेड़ भी
धीरे-धीरे ही आसमान छूते हैं।
नदियाँ भी पत्थरों से लड़कर नहीं,
उन्हें सहलाकर रास्ता बनाती हैं।
ज़िंदगी ने सिखाया रफ़्तार से बड़ा होता है दिशा का सच।
और मंज़िल से पहले सफ़र का इंसान बने रहना,
सबसे कठिन, पर सबसे सुंदर उपलब्धि है।
मैं हार से डरता नहीं।
क्योंकि हार सपनों का अंत नहीं,
उनकी भाषा बदलने का अवसर है।
हर ठोकर मेरे कदमों की लिखावट थोड़ी और साफ़ कर देती है।
मैं चाहता हूँ कि मेरे जाने के बाद
लोग मेरे नाम से पहले मेरे व्यवहार को याद करें।
क्योंकि शब्द हवा में खो जाते हैं,
पर संवेदनाएँ समय की किताब में दर्ज रहती हैं।
इसलिए मैं रोज़ थोड़ा-सा उजाला बोता हूँ
एक सच्ची मुस्कान में, एक ईमानदार प्रयास में,
एक अनकही मदद में, एक छोटी-सी उम्मीद में।
क्या पता, मेरे हिस्से का यह उजाला
किसी और की अँधेरी सुबह का पहला सूरज बन जाए।
और तब मैं समझूँगा —
जीवन की सबसे बड़ी सफलता ऊँचा उठना नहीं,
बल्कि जहाँ से गुज़रो, वहाँ रोशनी छोड़ जाना है।

श्री कार्तिक शर्मा
लेखा परीक्षक

❖ लेख ❖

प्रकृति का हिसाब-किताब: आज की सुविधा, कल की कीमत



हिसाब-किताब की दुनिया में हम अच्छी तरह जानते हैं कि कुछ भी मुफ़्त नहीं होता — हर लेन-देन का एक डेबिट है, एक क्रेडिट है, और अंत में बैलेंस बराबर करना ही पड़ता है। लेकिन एक खाता ऐसा भी है जिसे हम बरसों से मुफ़्त की सुविधा समझकर बरतते आए हैं — प्रकृति का खाता। हक़ीक़त यह है कि हम इस खाते से लगातार निकासी कर रहे हैं, जबकि उसकी चुकौती हमारी नहीं, हमारे बच्चों की जेब से होनी है।

बिजली का स्विच ऑन करना, बोतलबंद पानी ख़रीदना, हाथ में प्लास्टिक की थैली थाम लेना — ये सब आज इतने सहज लगते हैं कि इनकी असली क़ीमत का एहसास ही नहीं होता। पर हर सुविधा के पीछे एक लागत छुपी है। यह लागत आज के बिल में नहीं जुड़ती — यह चुपचाप जमा होती रहती है, और एक दिन ब्याज सहित चुकानी पड़ती है।

यह तस्वीर कहीं दूर की नहीं, अक्सर हमारी अपनी आँखों के सामने की है। दोपहर के खाने के लिए कमरा ख़ाली हो, फिर भी एसी और पंखे घंटों चलते रहते हैं। गोवा में बिजली की दरें देश के बाक़ी हिस्सों के मुक़ाबले काफ़ी कम हैं, और यही एक वजह है कि बिजली बचाने का दबाव हम पर उतना महसूस नहीं होता — पर बिल में भले कम दिखे, प्रकृति के खाते में निकासी उतनी ही दर्ज होती है, दर चाहे जो भी हो।

स्वच्छ हवा, भरपूर भूजल, उपजाऊ मिट्टी — यह सब हमें विरासत में मिला था। पर क्या हम इसे उसी हाल में आगे सौंप पाएंगे? अच्छी बात यह है कि इस खाते को घाटे से बचाना उतना कठिन नहीं जितना लगता है — ज़रूरत न होने पर बिजली के उपकरण बंद रखें, एक बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक से बचें, काग़ज़ का उपयोग सोच-समझकर करें, पानी बर्बाद न करें, और जहाँ मुमकिन हो सार्वजनिक परिवहन या कारपूलिंग को तरजीह दें।

अक्सर कहा जाता है कि यह धरती हमें अपने पूर्वजों से विरासत में नहीं मिली, बल्कि हमने इसे अपने बच्चों से उधार लिया है। आइए, प्रकृति के इस खाते को घाटे का नहीं, बचत का खाता बनाएं — ताकि जब अगली पीढ़ी हिसाब मिलाए, तो उनके नाम कर्ज़ नहीं, एक सुरक्षित विरासत दर्ज हो।

श्री गजानन मोदी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ लेख ❖

सन्नाटे की आवाज़



आज का इंसान शोर से घिरा हुआ है। मोबाइल की घंटियाँ, वाहनों का शोर, सोशल मीडिया की सूचनाएँ और भागदौड़ भरी दिनचर्या ने जीवन को इतना व्यस्त बना दिया है कि हम सन्नाटे की आवाज़ सुनना ही भूल गए हैं। लेकिन कभी-कभी यही सन्नाटा हमें अपने सबसे करीब ले जाता है।

जब हम कुछ देर अकेले बैठते हैं, बिना किसी स्क्रीन के, तब मन धीरे-धीरे अपने भीतर झाँकना शुरू करता है। हमें अपनी गलतियाँ दिखाई देती हैं, अधूरे सपने याद आते हैं और उन लोगों का महत्व समझ में आता है जिन्हें हम व्यस्तता के कारण समय नहीं दे पाए। यह आत्मचिंतन किसी किताब से नहीं, बल्कि अपने भीतर से मिलता है।

प्रकृति इसका सबसे सुंदर उदाहरण है। सुबह की शांत हवा, पेड़ों की हल्की सरसराहट और पक्षियों का मधुर स्वर हमें बताते हैं कि शांति भी एक भाषा है। यह भाषा बिना शब्दों के बहुत कुछ कह देती है। जो व्यक्ति इसे समझ लेता है, उसके निर्णय अधिक संतुलित और जीवन अधिक सरल हो जाता है।

आज आवश्यकता केवल तेज़ दौड़ने की नहीं, बल्कि सही समय पर रुककर अपने भीतर झाँकने की भी है। सन्नाटा हमें कमज़ोर नहीं बनाता, बल्कि हमें अपनी वास्तविक शक्ति से परिचित कराता है। जब मन शांत होता है, तब विचार स्पष्ट होते हैं और जीवन की दिशा भी अधिक साफ़ दिखाई देती है।

इसलिए हर दिन कुछ मिनट अपने लिए निकालना चाहिए। न कोई मोबाइल, न कोई शोर और न कोई जल्दबाज़ी। केवल स्वयं के साथ बिताया गया थोड़ा-सा समय जीवन को नई ऊर्जा, नई समझ और नई प्रेरणा दे सकता है। सन्नाटे की यही आवाज़ हमें बेहतर इंसान बनने की राह दिखाती है।

श्री रोहित धामा

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

खाली जेब का अमीर



गाँव के किनारे एक छोटा-सा घर था, जहाँ सत्तर वर्षीय रामलाल अकेले रहते थे। उनके पास न खेत थे, न दुकान और न ही कोई बड़ी जमा-पूँजी। लोग उन्हें गरीब कहते थे, लेकिन उनके चेहरे पर हमेशा मुस्कान रहती थी।

हर सुबह वे गाँव की गलियों से गुजरते और रास्ते में मिलने वाले बच्चों को कोई न कोई नई बात सिखाते। किसी को पेड़ लगाने की सलाह देते, किसी को पढ़ाई का महत्व समझाते, तो किसी बुज़ुर्ग का सामान उठाकर घर तक पहुँचा देते। धीरे-धीरे पूरा गाँव उन्हें "राम दादा" कहने लगा।

एक दिन शहर से एक पत्रकार गाँव पहुँचा। उसने सुना था कि इस गाँव में एक ऐसा आदमी रहता है जो बिना पैसे के भी सबका प्रिय है। पत्रकार ने रामलाल से पूछा, "आपके पास कुछ नहीं है, फिर भी लोग आपका इतना सम्मान क्यों करते हैं?"

रामलाल मुस्कुराए और बोले, "जिस चीज़ को बाँटने से वह बढ़ जाए, वही सबसे बड़ी दौलत है। मैंने पैसे नहीं बाँटे, मैंने समय, सम्मान और अपनापन बाँटा है।"

पत्रकार ने यह बात अपने लेख में लिखी। कुछ महीनों बाद उसी गाँव में एक भीषण बाढ़ आई। रामलाल का घर टूट गया। पूरे गाँव ने मिलकर दो ही दिनों में उनके लिए नया घर बना दिया। किसी ने ईंट दी, किसी ने लकड़ी, किसी ने श्रम और किसी ने भोजन।

रामलाल की आँखों में आँसू थे। उन्होंने कहा, "आज समझ आया कि मैंने जीवनभर जो कमाया था, वह बैंक में नहीं, लोगों के दिलों में जमा था।"

उस दिन गाँव के लोगों ने भी समझ लिया कि असली अमीरी जेब से नहीं, व्यवहार से पहचानी जाती है। धन कभी भी समाप्त हो सकता है, लेकिन अच्छे कर्म और सच्चे रिश्ते जीवनभर साथ चलते हैं।

शिक्षा: सच्ची संपत्ति पैसा नहीं, बल्कि इंसान का चरित्र, सेवा-भाव और दूसरों के दिलों में बनाई गई जगह होती है।

श्री रोहित धामा
लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

आख़िरी दीपक



शहर से लगभग पचास किलोमीटर दूर बसे छोटे-से गाँव "अमरपुर" की पहचान उसके विशाल बरगद के पेड़ और पुराने तालाब से थी। गाँव में बिजली तो थी, लेकिन अक्सर चली जाती थी। फिर भी हर शाम जब सूरज डूबता, गाँव के चौपाल पर एक मिट्टी का दीपक ज़रूर जलाया जाता। उस दीपक को जलाने की ज़िम्मेदारी पिछले चालीस वर्षों से एक ही व्यक्ति निभा रहा था—हरिनारायण।

हरिनारायण कोई बड़े अधिकारी या ज़मींदार नहीं थे। वे गाँव के पुराने प्राथमिक विद्यालय के सेवानिवृत्त शिक्षक थे। सफ़ेद धोती, हल्का-सा कुर्ता, कंधे पर पुराना गमछा और चेहरे पर सादगी भरी मुस्कान—यही उनकी पहचान थी। गाँव के बच्चे उन्हें "गुरुजी" कहकर पुकारते थे।

हर शाम वे अपने घर से मिट्टी का दीपक, थोड़ा-सा तेल और रूई की बाती लेकर चौपाल पहुँचते। दीपक जलाते, बरगद के नीचे बैठते और आने-जाने वालों से बातें करते। कई लोग पूछते, "गुरुजी, अब तो बिजली है। इस दीपक की क्या ज़रूरत?"

वे मुस्कुराकर कहते, "बिजली अँधेरा हटाती है, लेकिन परंपरा मन का उजाला बचाए रखती है।"

लोग उनकी बात सुनते, सिर हिलाते और अपने काम में लग जाते।

समय बीतता गया। गाँव बदलने लगा। कच्चे घरों की जगह पक्के मकान बनने लगे। बच्चे शहरों में पढ़ने जाने लगे। खेतों में मशीनें आ गईं। चौपाल पर बैठने वाले लोगों की संख्या कम होने लगी। अब अधिकांश लोग शाम को अपने-अपने घरों में मोबाइल और टीवी में व्यस्त रहते।

फिर भी गुरुजी रोज़ दीपक जलाते रहे।

एक दिन गाँव में नई सड़क बनी। उसके साथ आधुनिक एलईडी लाइटें भी लग गईं। पूरे गाँव में खुशी थी। सरपंच ने घोषणा की, "अब चौपाल पर दीपक जलाने की ज़रूरत नहीं रही। वहाँ हमेशा रोशनी रहेगी।"

लोगों ने तालियाँ बजाईं। किसी ने विरोध नहीं किया।

अगली शाम गुरुजी हमेशा की तरह दीपक लेकर चौपाल पहुँचे। उन्होंने देखा कि एलईडी लाइटें तेज़ी से चमक रही थीं। कुछ युवकों ने हँसते हुए कहा, "गुरुजी, अब आपका दीपक रिटायर हो गया।"

गुरुजी मुस्कुराए। उन्होंने कुछ नहीं कहा। चुपचाप दीपक जलाया और बरगद के नीचे रख दिया। दीपक की लौ एलईडी की तेज़ रोशनी में छोटी ज़रूर लग रही थी, लेकिन बुझी नहीं।

उस रात तेज़ आँधी आई। बिजली के खंभे गिर गए। पूरा गाँव अँधेरे में डूब गया। लोग घरों से बाहर निकले। तभी चौपाल की ओर से एक हल्की-सी रोशनी दिखाई दी। वही मिट्टी का दीपक अब भी जल रहा था। उसकी लौ हवा से लड़ते हुए भी टिमटिमा रही थी।

लोग उस रोशनी के सहारे चौपाल तक पहुँचे। किसी ने वहीं बच्चों को बैठाया, किसी ने बुज़ुर्गों को सहारा दिया। गाँव के कुछ युवकों ने उसी जगह से राहत कार्य शुरू किया। सुबह होने पर बिजली विभाग के कर्मचारी पहुँचे। उन्होंने कहा कि बिजली आने में दो दिन लग सकते हैं। दो दिनों तक गाँव की हर शाम उसी दीपक की रोशनी में बीती। तीसरे दिन जब बिजली वापस आई, तो लोगों का नज़रिया बदल चुका था। कुछ दिनों बाद गुरुजी बीमार पड़ गए। उम्र अपना असर दिखाने लगी थी। डॉक्टर ने आराम करने की सलाह दी। अब उनके लिए रोज़ चौपाल तक जाना कठिन हो गया।

एक शाम उन्होंने अपने पुराने छात्र निखिल को बुलाया। "बेटा," उन्होंने धीमी आवाज़ में कहा, "क्या तुम आज दीपक जला दोगे?"

निखिल कुछ पल चुप रहा। उसे याद आया कि वही कभी इस दीपक का मज़ाक उड़ाता था। उसने गुरुजी के हाथ से दीपक लिया और बोला, "आज से यह मेरी ज़िम्मेदारी है।"

उस दिन पहली बार किसी और ने चौपाल पर दीपक जलाया। धीरे-धीरे यह बात पूरे गाँव में फैल गई। अगले दिन एक लड़की बोली, "कल मैं जलाऊँगी।" उसके बाद एक किसान आगे आया। फिर एक दुकानदार।

फिर विद्यालय की एक छात्रा। देखते ही देखते यह दीपक किसी एक व्यक्ति का नहीं, पूरे गाँव की परंपरा बन गया। कुछ महीनों बाद गुरुजी का देहांत हो गया। पूरा गाँव उनके अंतिम संस्कार में उमड़ पड़ा। किसी ने कहा, "उन्होंने हमें पढ़ना सिखाया।" दूसरे ने कहा, "उन्होंने हमें इंसान बनना सिखाया।" लेकिन सबसे भावुक बात गाँव के एक छोटे बच्चे ने कही—"गुरुजी चले गए, पर उनका दीपक अभी भी जल रहा है।"

उस दिन से हर वर्ष उनकी पुण्यतिथि पर गाँव में कोई भाषण नहीं होता था। केवल एक दीपक जलाया जाता और पाँच मिनट का मौन रखा जाता। समय फिर आगे बढ़ा। दस वर्ष बाद अमरपुर को "आदर्श ग्राम" का पुरस्कार मिला। कई अधिकारी गाँव देखने आए। उन्होंने चौपाल पर रोज़ जलने वाले दीपक के बारे में पूछा।

सरपंच ने कहा, "यह केवल मिट्टी का दीपक नहीं है। यह हमें याद दिलाता है कि आधुनिकता अपनाइए, लेकिन अपनी जड़ों को मत भूलिए।" एक अधिकारी ने गाँव के बच्चों से पूछा, "तुम लोग रोज़ यह दीपक क्यों जलाते हो?" एक छोटी बच्ची ने मुस्कुराकर उत्तर दिया, "ताकि हमें याद रहे कि सबसे छोटी रोशनी भी सबसे बड़े अँधेरे से लड़ सकती है।" उसका उत्तर सुनकर सभी लोग कुछ क्षणों के लिए मौन हो गए।

उस शाम जब सूरज डूबा, चौपाल पर फिर वही दीपक जला। उसके चारों ओर बच्चे बैठे थे। कोई कहानी सुन रहा था, कोई किताब पढ़ रहा था, कोई दादी से पुराने किस्से पूछ रहा था। मोबाइल भी थे, बिजली भी थी, इंटरनेट भी था, लेकिन उस दीपक की लौ के सामने सबने कुछ देर के लिए अपने उपकरण एक ओर रख दिए। गाँव के लोगों ने महसूस किया कि विकास केवल ऊँची इमारतों, चौड़ी सड़कों और तेज़ इंटरनेट से नहीं होता। विकास तब पूरा होता है जब नई पीढ़ी अपने अतीत से जुड़ी रहे और पुरानी पीढ़ी नए समय को अपनाने का साहस रखे।

बरगद का वह पेड़ अब पहले से अधिक विशाल हो चुका था। उसकी छाया में बैठकर लोग केवल बातें नहीं करते थे, बल्कि एक-दूसरे की समस्याएँ भी सुनते थे। गाँव में यह नियम बन गया कि हर महीने एक शाम चौपाल पर सब मिलेंगे। कोई कविता सुनाएगा, कोई गीत गाएगा, कोई अपने अनुभव साझा करेगा। बच्चों को बुज़ुर्गों से सीखने का अवसर मिलेगा और बुज़ुर्गों को बच्चों के सपनों को समझने का।

धीरे-धीरे इस परंपरा का असर दिखाई देने लगा। गाँव में झगड़े कम होने लगे। लोग छोटे-छोटे विवाद आपस में बैठकर सुलझाने लगे। विद्यालय के बच्चों ने मिलकर पुस्तकालय बनाया। युवाओं ने तालाब की सफ़ाई की। महिलाओं ने स्वयं सहायता समूह बनाकर कई परिवारों की आय बढ़ाई। हर नई शुरुआत से पहले चौपाल पर वही दीपक जलाया जाता।

लोग कहते थे कि दीपक चमत्कार नहीं करता। वह केवल याद दिलाता है कि अगर एक छोटी लौ लगातार जल सकती है, तो मनुष्य का साहस भी कठिन समय में बुझना नहीं चाहिए।

बरसों बाद जब अमरपुर के बच्चे बड़े होकर अलग-अलग शहरों में नौकरी करने लगे, तब भी दीपावली पर वे गाँव लौटने की कोशिश करते। वे चौपाल पर जाकर उस दीपक के सामने कुछ क्षण अवश्य खड़े होते। उनके लिए वह केवल मिट्टी का दीपक नहीं, अपने बचपन, अपने गुरु और अपनी मिट्टी की याद था।

आज भी यदि कोई अमरपुर जाता है और शाम ढलने तक रुकता है, तो बरगद के नीचे एक छोटा-सा दीपक जलता दिखाई देता है। उसकी लौ बहुत बड़ी नहीं होती, पर उसे देखने वालों के मन में यह विश्वास

ज़रूर जगा देती है कि संसार को बदलने के लिए हमेशा बड़ी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती; कभी-कभी एक छोटा-सा दीपक, एक अच्छा विचार और एक निस्वार्थ मन ही पर्याप्त होता है।

शिक्षा: सच्चा परिवर्तन साधनों की अधिकता से नहीं, बल्कि अच्छे विचारों, परंपराओं के सम्मान, सामूहिक सहयोग और निरंतर छोटे-छोटे प्रयासों से आता है। एक व्यक्ति का सत्कर्म समय के साथ पूरे समाज की पहचान बन सकता है।

श्री रोहित धामा

लेखा परीक्षक

❖ ❖ ❖

❖ कहानी ❖

इस बारिश में वो बात नहीं थी



बारिश की छम-छम, भीगी मिट्टी की सोंधी खुशबू और रसोई से आती गरमागरम अदरक वाली चाय की महक—सब कुछ वैसा ही था। फिर भी इस बारिश में पिछली बारिश जैसी बात नहीं थी। इस बार रश्मि की खिलखिलाती हँसी नहीं थी। वह सामने बैठी तो थी, पर उसके होने का एहसास कहीं खो गया था।

रमेश चाय की चुस्कियाँ लेते हुए अतीत की गलियों में खो गया। मन बार-बार उसी एक गलती पर जाकर ठहर जाता, जिसने उनके जीवन की खुशियों पर एक स्थायी सन्नाटा बिछा दिया था।

यह कहानी है मेरठ में रहने वाले रश्मि और रमेश की।

दोनों बचपन के दोस्त थे। उन्होंने एक ही स्कूल और फिर एक ही इंजीनियरिंग कॉलेज से पढ़ाई की। कॉलेज के अंतिम वर्ष में दोनों का कैंपस प्लेसमेंट हो गया। रमेश को दिल्ली की एक बड़ी कंपनी में नौकरी मिली, जबकि रश्मि का चयन दिल्ली और मेरठ—दोनों जगह हुआ। बेहतर वेतन के बावजूद उसने मेरठ की नौकरी चुनी, क्योंकि उसके लिए रिश्ते करियर से अधिक महत्वपूर्ण थे।

रमेश की माँ शांति बचपन से ही रश्मि को पसंद करती थीं। उसकी सादगी, गंभीरता और संस्कारों ने उन्हें हमेशा प्रभावित किया था।

कुछ समय बाद जब रश्मि के विवाह की बातें शुरू हुईं, तो संयोग से एक दिन बाज़ार में उसकी माँ रेखा की मुलाकात शांति से हो गई। बातचीत के दौरान जब रेखा ने किसी अच्छे लड़के की तलाश का ज़िक्र किया, तो शांति के मन में तुरंत रमेश और रश्मि का ख्याल आया।

शाम को उन्होंने रमेश से पूछा, "बेटा, अगर मैं रश्मि का रिश्ता तुम्हारे लिए सोचूँ, तो तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं?" रमेश ने मुस्कुराकर कहा, "माँ आप जो ठीक समझो"।

इसके बाद शांति ने रेखा से विवाह का प्रस्ताव रखा। दोनों परिवार एक-दूसरे को वर्षों से जानते थे, इसलिए रिश्ता तय हो गया। अगले महीने रमेश छुट्टी लेकर मेरठ आया और पूरे परिवार की मौजूदगी में दोनों की सगाई हो गई। छह महीने के बाद की विवाह की तारीख भी निश्चित की गई।

दिल्ली और मेरठ की कम दूरी ने उनके रिश्ते को और मजबूत कर दिया। रमेश हर सप्ताह मेरठ आता और धीरे-धीरे बचपन की दोस्ती गहरे प्रेम में बदल गई।

देखते ही देखते विवाह का शुभ दिन भी आ गया। ढोलक की थाप, रिश्तेदारों की चहल-पहल और मंगल गीतों के बीच दोनों का विवाह पूरे रीति-रिवाज से संपन्न हुआ। विदाई के समय रश्मि के मायके में सन्नाटा छा गया, वहीं ससुराल में उसके आगमन से घर जैसे खिल उठा। शांति ने बहू नहीं, बेटी का स्वागत किया। कुछ दिनों बाद सभी रिश्तेदार लौट गए और घर में केवल शांति, रमेश और रश्मि रह गए।

अगले सप्ताह रमेश को फिर दिल्ली लौटना था। उसके जाने के बाद घर में शांति और रश्मि साथ रहतीं। धीरे-धीरे उनके बीच सास-बहू का नहीं, बल्कि माँ-बेटी और सहेलियों जैसा रिश्ता बन गया। रश्मि पूरे मन से घर संभालती और शांति का ध्यान रखती।

शादी के बाद जीवन अपनी रफ्तार से चल पड़ा। रमेश हर सोमवार सुबह दिल्ली चला जाता और शनिवार की शाम मेरठ लौट आता। रश्मि पूरे सप्ताह उसके आने की तैयारी करती। कभी उसकी पसंद का खाना बनाती, कभी छत पर बैठकर दोनों देर रात तक भविष्य के सपने देखा करते।

समय बीतता गया। एक दिन रमेश की कंपनी ने उसे विदेश में दो वर्ष के प्रोजेक्ट का प्रस्ताव दिया। वेतन बहुत अच्छा था और करियर के लिए भी यह बड़ा अवसर था। रमेश बहुत उत्साहित था।

उसने घर आकर यह बात बताई। शांति ने मुस्कुराकर कहा, "बेटा, इतना बड़ा मौका बार-बार नहीं मिलता"।

लेकिन रश्मि चुप रही। रमेश ने पूछा, "क्या हुआ? तुम खुश नहीं हो?"

रश्मि ने धीरे से कहा, "खुश हूँ... पर क्या इतना ज़रूरी है जाना? दिल्ली की नौकरी भी अच्छी है। माँ अब पहले जैसी स्वस्थ नहीं रहतीं।"

रमेश ने कहा, "रश्मि, ज़िंदगी केवल रिश्तों से नहीं चलती। कुछ सपने भी पूरे करने होते हैं।" रश्मि ने फिर कुछ नहीं कहा। भीगे मन से उसने रमेश को जाने दिया। कुछ ही महीनों बाद रमेश विदेश चला गया। शुरुआत में रोज़ बातें होती थीं। फिर काम बढ़ने लगा, और वो व्यस्त रहने लगा। वीडियो कॉल सप्ताह में एक बार होने लगी। कई बार समय के अंतर की वजह से बात भी नहीं हो पाती।

उधर शांति की तबीयत धीरे-धीरे बिगड़ने लगी। रश्मि नौकरी करती, घर संभालती और अस्पताल के चक्कर भी लगाती। उसने कभी रमेश पर बोझ नहीं डाला। हमेशा यही कहती, "यहाँ सब ठीक है। तुम अपना काम देखो। यहाँ मै सब कुछ सम्हाल रहीं हूँ."

एक रात शांति की तबीयत अचानक बहुत खराब हो गई। उन्हें अस्पताल में भर्ती करना पड़ा। रश्मि ने कई बार रमेश को फोन किया, लेकिन वह एक महत्वपूर्ण प्रस्तुति में था, वह बार-बार फोन काट दे रहा था।

दो घंटे बाद काम से खाली होने के बाद उसने फोन किया। जब तक उससे बात हुई, तब तक बहुत देर हो चुकी थी। शांति इस दुनिया को विदा कर चुकी थी, जाते समय उसके अंतिम शब्द थे रमेश!

रमेश अगले दिन की पहली फ्लाइट से भारत पहुँचा। घर में सन्नाटा था। शांति अब इस दुनिया में नहीं थीं।रमेश माँ के कमरे में गया। तकिए के पास एक छोटा-सा लिफाफा रखा था। उसमें लिखा था रमेश के लिए। काँपते हाथों से रमेश ने लिफ़ाफ़ा खोला।

उसमें लिखा था, "बेटा, अपने सपने ज़रूर पूरे करना, लेकिन इतना आगे कभी मत निकल जाना कि पीछे मुड़कर देखने का समय ही न बचे। पैसा फिर से कमाया जा सकता है, लेकिन अपनों के साथ बिताया हुआ समय कभी लौटकर नहीं आता।"

पत्र पढ़ते-पढ़ते उसकी आँखें भर आईं। उसने देखा, दरवाज़े पर रश्मि खड़ी थी। पिछले कई महीनों की थकान उसके चेहरे पर साफ़ दिखाई दे रही थी। उसके चेहरे पर एक शिकन से थी मानों वो कुछ शिकायत करना चाह रही हो, लेकिन उसने कभी शिकायत नहीं की।

रमेश उसके सामने आकार बोला, "मैं हार गया, रश्मि। मैंने समझा था कि सबसे बड़ी सफलता ऊँचा पद और बड़ी तनख्वाह है। पर सबसे बड़ी सफलता तो अपने लोगों के साथ होना है।"

रश्मि की आँखों में भी आँसू थे। वह बोली, "गलती सपने देखने की नहीं थी, रमेश... गलती यह थी कि तुमने उन सपनों में अपने लोगों के लिए जगह छोटी कर दी।"

कुछ महीनों बाद रमेश ने विदेश की नौकरी छोड़ दी और मेरठ लौट आया। उसने मेरठ में ही नई नौकरी कर ली, ताकि हर शाम अपने घर लौट सके। आज फिर बारिश हो रही थी।

मिट्टी से वही सोंधी खुशबू उठ रही थी। रसोई से अदरक वाली चाय की महक आ रही थी। रश्मि सामने बैठी थी। वह मुस्कुरा भी रही थी। लेकिन रमेश जानता था कि कुछ बरसातें इंसान को हमेशा के लिए बदल देती हैं। उसने चाय का कप हाथ में लिया और खिड़की से बाहर देखते हुए मन ही मन कहा—"ज़िंदगी में सबसे बड़ी गलती गलत फैसला लेना नहीं होती... सबसे बड़ी गलती सही लोगों को देर से समझना होती है।" बाहर बारिश लगातार बरस रही थी। सब कुछ पहले जैसा ही था... फिर भी, इस बारिश में पिछली बारिश जैसी बात नहीं थी।

सुश्री प्रियंका केसरवानी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

❖ कविता ❖

भारतीय संस्कृति



संस्कृति केवल शब्द नहीं, जीवन का मधुर विधान है।
यह भारत की आत्मा का स्वर, युगों-युगों का सम्मान है।
इसमें वेदों की वाणी गूँजे, उपनिषदों का ज्ञान मिले।
इसमें करुणा का दीप जले, हर मन को नव उत्थान मिले।
गंगा की सी निर्मल धारा, हिमगिरि-सी अडिग महान।
मरुभूमि का धैर्य समेटे, सागर-सा विस्तृत सम्मान।
राम की मर्यादा है इसमें, कृष्ण की मधुर मुस्कान है।
बुद्ध की करुणा बहती इसमें, नानक का कल्याण है।
कबीर की साखी की सादगी, मीरा का अनुराग।
तुलसी की पावन चौपाई, सूर का अनुपम विराग।
दीपावली का दीप यही है, होली का उल्लास है।
रक्षा-सूत्र की पावन डोरी, ईद की मिठास है।
नृत्य, गीत और लोक-कथाएँ, रंग-बिरंगी पहचान हैं।
भाषाएँ चाहे अनेक हों, भाव एक समान हैं।
यह सिखलाती— प्रेम करो तुम, घृणा कभी मन में न पालो।
"वसुधैव कुटुम्बकम्" का संदेश, हर मानव को गले लगा लो।
समय बदलता, युग बदलते, बदल रहे हैं आचार-विचार।
पर संस्कृति की जड़ें अमर हैं, इनसे ही है जीवन साकार।
संस्कृति का दीप अनश्वर है, जो हर युग में प्रकाश करे।
जब तक इसकी ज्योति प्रखर है, भारत विश्व का पथ प्रदर्शक रहे।

सुश्री प्रियंका केसरवानी

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी

❖ ❖ ❖

झलकियाँ

स्वतंत्रता दिवस समारोह – 2026



स्वतंत्रता दिवस पर सजा हुआ कार्यालय भवन



ध्वजारोहण दृश्य



महालेखाकार द्वारा ध्वजारोहण



सुरक्षा गार्डों द्वारा सलामी



सभागार में आयोजित कार्यक्रम



बालिकाओं द्वारा प्रस्तुति



समारोह में उपस्थित अधिकारी, कर्मचारी एवं उनके परिवारजन



बालक द्वारा प्रस्तुति

संसदीय राजभाषा समिति का निरीक्षण/दौरा कार्यक्रम, गोवा (28.08.2026 – 01.09.2026)



समिति के समक्ष कार्यालय की राजभाषा प्रगति संबंधी प्रलेख प्रस्तुत करते हुए



सुश्री अतूर्वा सिन्हा, महानिदेशक



सुश्री इति शुक्ला, महालेखाकार



श्री देवेन्द्र अब्बिगारी, वरिष्ठ उप महालेखाकार



निरीक्षण के दौरान लगाई गई राजभाषा प्रदर्शनी



राजभाषा समिति निरीक्षण का एक दृश्य

हिन्दी पखवाड़ा – 2026 (14 से 30 सितंबर 2026)



दीप प्रज्वलन एवं पखवाड़े के कार्यक्रम का शुभारंभ



हिन्दी पत्रिका के विमोचन अवसर पर पुष्पगुच्छ भेंट करते हुए



कार्यालयीन राजभाषा शील्ड — प्रथम विजेता टीम



विमोचन समारोह की एक झलक



पखवाड़े की एक कार्यशाला/सत्र में सहभागी



उद्घाटन सत्र में उपस्थित अधिकारी एवं कर्मचारीगण



रंगोली प्रतियोगिता विजेता को प्रमाण-पत्र प्रदान करते हुए



क्विज़ प्रतियोगिता में प्रथम विजेता टीम को प्रमाण-पत्र प्रदान करते हुए



कार्यालयीन राजभाषा शील्ड — तृतीय विजेता टीम



अंताक्षरी प्रतियोगिता में विजेता टीम को प्रमाण-पत्र प्रदान करते हुए

गोवा दर्शन











सागर ऊर्मिका

"साहित्य के इस सागर में उठती एक नई 'ऊर्मिका' के साथ... जय हिंद!"

प्रकाशक
कार्यालय महालेखाकार, गोवा
आलतो परवरी, गोवा